

यूनिट -1

भारतीय ज्ञान परम्परा की परिभाषा (Definition of Indian Knowledge Tradition)

भारतीय ज्ञान परम्परा से अभिप्राय है —

भारत में प्राचीन काल से चली आ रही वह ज्ञान, विचार, दर्शन, आचार, संस्कृति और वैज्ञानिक दृष्टि की निरन्तर परम्परा, जो मनुष्य, समाज, प्रकृति और ब्रह्माण्ड के समन्वय को आधार बनाकर विकसित हुई है। संक्षिप्त परिभाषाएँ —

1. “भारतीय ज्ञान परम्परा वह समग्र बौद्धिक परम्परा है जो वेदों, उपनिषदों, दर्शन, आयुर्वेद, गणित, ज्योतिष, साहित्य, कला, और आध्यात्मिकता के रूप में प्रकट हुई है।”
2. “भारतीय ज्ञान परम्परा मानव, प्रकृति और परमात्मा के त्रिविध सम्बन्ध पर आधारित एक समग्र ज्ञान दृष्टि है।”

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा (Concept of Indian Knowledge Tradition)

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा “सर्वे भवन्तु सुखिनः”, “वसुधैव कुटुम्बकम्”, तथा “सत्यं शिवं सुन्दरम्” जैसे सार्वभौमिक सिद्धान्तों पर आधारित है।

यह परम्परा ज्ञान को केवल पुस्तक या शिक्षा तक सीमित नहीं मानती, बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में अनुभव, आचरण और व्यवहार से जोड़ती है।

मुख्य अवधारणाएँ :

1. **समग्र दृष्टिकोण (Holistic Approach)** – जीवन, प्रकृति, समाज और ब्रह्माण्ड सबका एकीकृत अध्ययन।
2. **आध्यात्मिकता एवं नैतिकता** – ज्ञान का उद्देश्य केवल भौतिक उन्नति नहीं, बल्कि आत्मकल्याण और लोककल्याण है।
3. **अनुभव आधारित ज्ञान (Experiential Knowledge)** – प्रत्यक्ष अनुभव, तर्क और श्रुति पर आधारित।
4. **सह-अस्तित्व की भावना** – मानव और प्रकृति के मध्य संतुलन पर बल।
5. **अनवरत परम्परा** – वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक यह निरन्तर विकसित होती रही है।

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा (Concept of Indian Knowledge Tradition)

भूमिका (INTRODUCTION)

भारत प्राचीन काल से ही ज्ञान, विज्ञान, दर्शन और संस्कृति का अग्रदूत रहा है।

यहाँ का ज्ञान केवल पुस्तकीय न होकर अनुभव, आचरण और जीवनमूल्यों से जुड़ा हुआ रहा है।

इसी सतत् प्रवाहित ज्ञानधारा को हम “भारतीय ज्ञान परम्परा” कहते हैं।

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा में वह समग्र दृष्टिकोण निहित है,
जो मानव, समाज, प्रकृति और परमात्मा — इन सभी के संतुलित सह-अस्तित्व पर आधारित है।

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा (CONCEPT OF INDIAN KNOWLEDGE TRADITION)

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा यह बताती है कि —

“ज्ञान का उद्देश्य केवल भौतिक उन्नति नहीं, बल्कि आत्मकल्याण और लोककल्याण दोनों है।”

यह परम्परा सत्य, अहिंसा, धर्म, करुणा, समरसता और आत्मज्ञान जैसे मूल्यों पर आधारित है।

इसमें ज्ञान को केवल तर्क या प्रयोग से नहीं, बल्कि श्रुति (सुनना), स्मृति (स्मरण), अनुभव और तपस्या के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

मुख्य विशेषताएँ / अवधारणात्मक तत्व

1. समग्र दृष्टिकोण (HOLISTIC APPROACH)

भारतीय ज्ञान परम्परा जीवन को टुकड़ों में नहीं बाँटती —

यह मानती है कि भौतिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक जीवन एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

2. आध्यात्मिकता एवं नैतिकता (SPIRITUAL AND ETHICAL FOUNDATION)

यह परम्परा कहती है कि ज्ञान तभी सार्थक है जब वह आत्मकल्याण और लोककल्याण में सहायक हो।

“सत्यं वद, धर्मं चर” इसका मूल संदेश है।

3. अनुभव आधारित ज्ञान (EXPERIENTIAL LEARNING)

ज्ञान का आधार केवल शास्त्र नहीं, बल्कि अनुभव और व्यवहार है।

ऋषियों ने “प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द” — इन तीन प्रमाणों के माध्यम से सत्य की खोज की।

4. सह-अस्तित्व की भावना (SENSE OF COEXISTENCE)

“वसुधैव कुटुम्बकम्” और “सर्वे भवन्तु सुखिनः” जैसे सिद्धान्तों में

संपूर्ण विश्व को एक परिवार मानने की भावना व्यक्त होती है।

मनुष्य, पशु, वनस्पति और प्रकृति — सभी एक ही सृष्टि के अंग हैं।

5. निरन्तरता और विकासशीलता (CONTINUITY AND EVOLUTION)

भारतीय ज्ञान परम्परा किसी एक समय तक सीमित नहीं है;

यह वैदिक युग से लेकर आधुनिक विज्ञान युग तक निरन्तर विकसित होती रही है।

हर युग में इसने नए विचार, मूल्य और सिद्धान्त जोड़े।

6. व्यावहारिकता (PRACTICAL ORIENTATION)

ज्ञान को केवल सिद्धान्त रूप में नहीं रखा गया,

बल्कि योग, आयुर्वेद, कृषि, गणित, खगोल, वास्तु, नीति और शासन में उसका प्रयोग किया गया।

भारतीय ज्ञान परम्परा के प्रमुख क्षेत्र

- वेद एवं उपनिषद् – परम सत्य की खोज
- दर्शन शास्त्र – जीवन और ब्रह्माण्ड का तात्त्विक विश्लेषण

- आयुर्वेद – स्वास्थ्य और चिकित्सा का विज्ञान
- गणित और खगोल – वैज्ञानिक दृष्टि का विकास
- नाट्यशास्त्र और कला – सौंदर्य और संस्कार की अभिव्यक्ति
- नीति एवं शासन – न्याय, धर्म और सामाजिक समरसता

भारतीय ज्ञान परम्परा का दायरा (SCOPE OF INDIAN KNOWLEDGE TRADITION)

भारतीय ज्ञान परम्परा का दायरा (Scope of Indian Knowledge Tradition)

(यह उत्तर विस्तृत रूप में है, दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के लिए उपयुक्त ५)

भूमिका (INTRODUCTION)

भारत प्राचीन काल से ही ज्ञान और दर्शन की भूमि रहा है।

यहाँ का ज्ञान केवल धार्मिक या दार्शनिक ही नहीं, बल्कि विज्ञान, गणित, कला, साहित्य, चिकित्सा, समाज और पर्यावरण जैसे सभी क्षेत्रों में फैला हुआ है।

इसीलिए कहा जाता है कि —

“भारतीय ज्ञान परम्परा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को स्पर्श करती है।”

भारतीय ज्ञान परम्परा का दायरा अत्यन्त विस्तृत, समग्र और बहुआयामी है, जो मनुष्य और ब्रह्माण्ड के बीच संतुलन पर आधारित है।

भारतीय ज्ञान परम्परा का दायरा (SCOPE IN DETAIL)

भारतीय ज्ञान परम्परा का दायरा अनेक क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है —

1. दार्शनिक और आध्यात्मिक दायरा

- भारतीय ज्ञान का मूल आधार वेद, उपनिषद्, पुराण, गीता और दर्शनशास्त्र हैं।
 - इसमें आत्मा, ब्रह्म, कर्म, मोक्ष, धर्म और सत्य जैसे दार्शनिक विचारों की व्याख्या की गई है।
 - छह दर्शनों — सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त — में जीवन के सभी पहलुओं की विवेचना की गई है।
 - यह दायरा आत्मज्ञान, आत्मसंयम और परम सत्य की खोज पर केन्द्रित है।
-

2. वैज्ञानिक दायरा

- भारतीय ज्ञान परम्परा में विज्ञान और तर्क का विशेष स्थान है।
- गणित, खगोलशास्त्र, रसायन, धातु विज्ञान, कृषि, चिकित्सा और वास्तुशास्त्र में भारतीय विद्वानों ने अद्भुत योगदान दिया।

मुख्य उदाहरण :

- आर्यभट – शून्य, दशमलव पद्धति और ग्रहों की गति का ज्ञान।
 - चरक व सुश्रुत – आयुर्वेद और शल्य चिकित्सा के जनक।
 - नागरजुना – रसायन और धातु विज्ञान में विशेष योगदान।
 - वराहमिहिर – खगोल और ज्योतिष के महान विद्वान।
-

3. साहित्यिक और कलात्मक दायरा

- भारत में अनेक भाषाओं — संस्कृत, पाली, प्राकृत, तमिल, हिन्दी आदि में समृद्ध साहित्य रचा गया।
 - काव्य, नाटक, निबंध, उपन्यास, संगीत, नृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला आदि कलाएँ इस ज्ञान परम्परा का अंग हैं।
 - **भरत मुनि का नाट्यशास्त्र, कालिदास के काव्य, तंजावर मंदिर की मूर्तिकला** इसका प्रमाण हैं।
-

4. सामाजिक और नैतिक दायरा

- भारतीय ज्ञान परम्परा समाज में **धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष** के संतुलन को आदर्श मानती है।
- परिवार, शिक्षा, नीति, न्याय, सेवा, करुणा, सत्य, अहिंसा और सहिष्णुता पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को बढ़ावा देती है।

- यह मान्यता देती है कि —

“**वसुधैव कुटुम्बकम्**” (सारा विश्व एक परिवार है)

“**सर्वे भवन्तु सुखिनः**” (सब सुखी हों)

5. पर्यावरणीय और प्राकृतिक दायरा

- भारतीय परम्परा में **प्रकृति को देवी स्वरूप** माना गया है।
 - जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश — पंचतत्त्वों की पूजा और सम्मान की परम्परा रही है।
 - ऋग्वेद में नदियों, पर्वतों, वृक्षों और पशुओं के प्रति श्रद्धा के भाव मिलते हैं।
 - यह दायरा पर्यावरण संरक्षण और **सह-अस्तित्व** की भावना को बढ़ावा देता है।
-

6. शैक्षणिक और सांस्कृतिक दायरा

- तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय ज्ञान के महान केन्द्र थे।
 - **गुरु-शिष्य परम्परा** भारतीय शिक्षा प्रणाली की आत्मा थी।
 - यह शिक्षा केवल बौद्धिक नहीं, बल्कि **नैतिक, व्यावहारिक और आध्यात्मिक** विकास पर केन्द्रित थी।
-

7. राजनैतिक और आर्थिक दायरा

- **अर्थशास्त्र** (कौटिल्य), **मनुस्मृति** और **महाभारत** में शासन, न्याय, कर व्यवस्था और आर्थिक नीतियों का उल्लेख मिलता है।
 - यह परम्परा **धर्म और नीति पर आधारित शासन प्रणाली** का समर्थन करती है।
-

विज्ञान में भारतीय ज्ञान परंपरा का अवलोकन

विज्ञान में भारतीय ज्ञान परम्परा का अवलोकन (विस्तृत जानकारी)

भारतीय सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है, जिसने विज्ञान, गणित, खगोल, औषधि, धातु विज्ञान, कृषि, पर्यावरण, दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में अद्भुत योगदान दिया। भारतीय ज्ञान परम्परा केवल आध्यात्मिक या धार्मिक नहीं थी, बल्कि यह **अनुभव, प्रयोग और अवलोकन पर आधारित वैज्ञानिक परम्परा** थी।

1. भारतीय ज्ञान परम्परा का मूल स्वरूप

भारतीय ज्ञान परम्परा का आधार 'सत्य की खोज' (Search for Truth) है।

यह परम्परा 'ऋषियों' और 'आचार्यों' के निरंतर प्रयासों से विकसित हुई, जिन्होंने प्रकृति और ब्रह्मांड के रहस्यों को समझने का प्रयास किया।

मुख्य विशेषताएँ –

- ज्ञान का आधार **प्रयोग और अनुभव** था।
- प्रकृति के साथ **संतुलन और सह-अस्तित्व** की भावना।
- विज्ञान और अध्यात्म का **समन्वय**।
- **सतत विकास और मानव कल्याण** को प्राथमिकता।

2. भारतीय विज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारत में विज्ञान की परम्परा वैदिक काल से चली आ रही है।

वेदों में प्रकृति, तत्व, खगोल, औषधि, गणित, कृषि आदि के अनेक वैज्ञानिक सिद्धांतों का उल्लेख मिलता है।

(क) वैदिक कालीन विज्ञान

- ऋग्वेद में अग्नि, वायु, जल, सूर्य, धरा जैसे प्राकृतिक तत्वों के गुणों का उल्लेख है।
- यजुर्वेद में कृषि, धातु विज्ञान और औषधियों का ज्ञान मिलता है।
- अथर्ववेद में औषधीय पौधों, बीमारियों के कारणों और उनके उपचार का विस्तृत वर्णन है।

3. प्रमुख वैज्ञानिक शाखाएँ और भारतीय योगदान

(1) गणित और ज्योतिष (MATHEMATICS & ASTRONOMY)

- **आर्यभट (476 ई.):** "आर्यभटीय" ग्रन्थ में पृथ्वी की परिक्रमा, π (पाई) का मान, और त्रिकोणमिति का वर्णन।
- **भास्कराचार्य (भास्कर II):** "लीलावती" और "बीजगणित" जैसे ग्रंथों में बीजगणित, कैलकुलस और ग्रह गति के सिद्धांत।
- **वराहमिहिर:** "बृहत्संहिता" में ग्रह, नक्षत्र, मौसम, खगोल और वास्तुशास्त्र के सिद्धांत।

(2) भौतिक विज्ञान और रसायन (PHYSICS & CHEMISTRY)

- **कणाद ऋषि (वैशेषिक दर्शन):** परमाणु (अणु) सिद्धांत के प्रवर्तक। उन्होंने कहा — "परमाणु अविभाज्य है और सभी पदार्थों का मूल तत्व है।"
- **नागरजुना (2वीं सदी):** रसायन और धातु विज्ञान में अग्रणी।
 - उन्होंने धातु शोधन, मिश्र धातु निर्माण और औषधीय रसायन का ज्ञान दिया।

(3) चिकित्सा विज्ञान (MEDICAL SCIENCE)

- **चरक संहिता** (चरक): शरीर की रचना, औषध निर्माण, रोग निदान, और चिकित्सा पद्धतियों का अद्भुत विवरण।
 - **सुश्रुत संहिता** (सुश्रुत): शल्य चिकित्सा (Surgery) का प्रथम ग्रन्थ।
 - उन्होंने नेत्र, नाक, कान, और अस्थि शल्य क्रियाओं का वर्णन किया।
 - प्लास्टिक सर्जरी के जनक माने जाते हैं।
-

(4) पर्यावरण और कृषि विज्ञान

- प्राचीन भारत में पर्यावरण संतुलन को धर्म का अंग माना गया।
 - “वृक्ष, जल, भूमि और पशु” — इनका संरक्षण सर्वोपरि था।
 - ग्रंथ जैसे कृषि-पराशर में बीज चयन, फसल चक्र, और भूमि परीक्षण की विधियाँ दी गई हैं।
-

(5) धातु विज्ञान (METALLURGY)

- भारत में लोहे, तांबे, सोने, और स्टील का उत्पादन वैदिक काल से होता था।
 - **दिल्ली का लौह स्तंभ** (Iron Pillar) आज भी जंग-रहित खड़ा है, जो धातु विज्ञान की उच्च तकनीक को दर्शाता है।
-

(6) वास्तु और अभियांत्रिकी (ARCHITECTURE & ENGINEERING)

- वास्तुशास्त्र और शिल्पशास्त्र में भवन निर्माण, जलसंचय, दिशा और ऊर्जा संतुलन का वैज्ञानिक विवरण।
 - सिंधु घाटी सभ्यता में योजनाबद्ध नगर, जल निकासी व्यवस्था और नाप-जोख के वैज्ञानिक मापदंड दिखाई देते हैं।
-

4. आधुनिक विज्ञान पर प्रभाव

भारतीय ज्ञान परम्परा ने आधुनिक विज्ञान की कई शाखाओं को दिशा दी।

- **शून्य (Zero)** और **दशमलव प्रणाली** भारतीय योगदान हैं, जिनके बिना आधुनिक गणित असंभव है।
- आयुर्वेद ने आधुनिक **फार्माकोलॉजी** और **सर्जरी** की नींव रखी।
- “योग” और “प्राणायाम” अब वैज्ञानिक रूप से मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए प्रभावी माने जाते हैं।

ज्ञान प्रतिमानों पर भारतीय ज्ञान परंपरा आधारित दृष्टिकोण

1. परिचय

भारतीय ज्ञान परंपरा (Indian Knowledge Tradition) का केंद्र बिंदु **ज्ञान (Jñāna)** है। यह न केवल अनुभव और तर्क पर आधारित है, बल्कि आध्यात्मिक और मूल्यात्मक आयामों को भी समाहित करता है।

भारतीय दर्शन में ज्ञान को प्रत्यक्ष (Pratyakṣa), अनुमान (Anumāna), शब्द (Śabda / शास्त्र प्रमाण) आदि माध्यमों से समझा गया है।

2. ज्ञान प्रतिमानों (PATTERNS OF KNOWLEDGE)

ज्ञान प्रतिमान से आशय है – ज्ञान का स्वरूप, संरचना और इसे प्राप्त करने के तरीके। भारतीय परंपरा में मुख्य ज्ञान प्रतिमान निम्न हैं:

2.1 प्रत्यक्ष ज्ञान (PRATYAKṢA)

- **परिभाषा:** जो ज्ञान सीधे अनुभव या इन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त होता है।
 - **विशेषताएँ:**
 - इन्द्रिय आधारित
 - तात्कालिक अनुभव
 - विश्वसनीय और सटीक
 - **उदाहरण:** आग का ताप, पानी का ठंडा होना।
 - **दार्शनिक दृष्टिकोण:**
 - न्याय दर्शन: प्रत्यक्ष को सत्य ज्ञान का प्रमुख स्रोत मानता है।
-

2.2 अनुमान (ANUMĀNA)

- **परिभाषा:** जो ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर तर्क या संकेत से प्राप्त किया जाता है।
 - **विशेषताएँ:**
 - तर्कसंगत
 - प्रत्यक्ष ज्ञान का विस्तार
 - संभाव्यता और प्रमाणिकता पर आधारित
 - **उदाहरण:** धुआँ देखकर आग का अनुमान लगाना।
 - **दार्शनिक दृष्टिकोण:**
 - न्याय और वैशेषिक दर्शन: अनुमान को ज्ञान का वैध स्रोत मानते हैं।
-

2.3 शब्द / शास्त्र ज्ञान (ŚABDA PRAMĀṆA)

- **परिभाषा:** ज्ञान जो शास्त्रों, ग्रंथों, गुरुओं या प्रमाणित स्रोतों से प्राप्त होता है।
- **विशेषताएँ:**
 - अप्रत्यक्ष ज्ञान
 - परंपरा और अनुशासन पर आधारित
 - समाज और संस्कृति का ज्ञान
- **उदाहरण:** वेदों, उपनिषदों, गीता के ज्ञान।
- **दार्शनिक दृष्टिकोण:**
 - मीमांसा दर्शन: शास्त्र प्रमाण (शब्द) को अंतिम सत्य का स्रोत मानता है।

2.4 उपासना और अंतर्ज्ञान (MEDITATIVE / INTUITIVE KNOWLEDGE)

- **परिभाषा:** ध्यान, योग और साधना के माध्यम से प्राप्त ज्ञान।
 - **विशेषताएँ:**
 - आत्म-साक्षात्कार पर आधारित
 - ज्ञान का अनुभवात्मक और निहित स्वरूप
 - स्थायी और सुसंगत
 - **उदाहरण:** ध्यान में ब्रह्म की अनुभूति।
 - **दार्शनिक दृष्टिकोण:**
 - अद्वैत वेदांत: प्रत्यक्ष अनुभव और अंतर्ज्ञान को सर्वोच्च ज्ञान मानता है।
-

3. भारतीय दृष्टिकोण की विशेषताएँ

1. **संपूर्ण दृष्टिकोण:** ज्ञान केवल तात्त्विक या वैज्ञानिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और नैतिक भी है।
 2. **बहुस्तरीय ज्ञान:** अनुभव, तर्क, ग्रंथ, और साधना को एक साथ मान्यता।
 3. **प्रमाण आधारित प्रणाली:** ज्ञान के स्रोतों का वर्गीकरण (प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, अंतर्ज्ञान)।
 4. **अनुभव और अनुशासन:** प्रयोग और साधना दोनों ज्ञान के लिए आवश्यक।
 5. **सत्य और मोक्ष केंद्रित:** ज्ञान का अंतिम लक्ष्य केवल सूचना नहीं, बल्कि मुक्ति और जीवन में मूल्यपूर्ण उद्देश्य है।
-

4. ज्ञान प्रतिमानों का उपयोग

- शिक्षा और अध्यापन में
 - वैज्ञानिक खोज और अनुसंधान में
 - नैतिक निर्णय और जीवन दर्शन में
 - योग, ध्यान और आध्यात्मिक साधना में
-

बीज विज्ञान में भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुप्रयोग

बीज विज्ञान (Seed Science) में **भारतीय ज्ञान परंपरा** का योगदान और अनुप्रयोग गहन और बहुआयामी है। इसे समझने के लिए हमें पारंपरिक भारतीय कृषि, आयुर्वेद, वृक्षायुर्वेद और प्राचीन साहित्य में उल्लेखित बीज उत्पादन, संरक्षण, वर्गीकरण और गुण सुधार की तकनीकों को देखना होगा। नीचे इसे व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया गया है:

1. बीज चयन और गुणवत्तापरक प्रथाएँ

भारतीय ज्ञान परंपरा में बीज के चयन पर विशेष ध्यान दिया गया।

- सिंहनीति और वृक्षायुर्वेद ग्रंथों में बीज की शुद्धता, स्वास्थ्य और किस्म को महत्व दिया गया।
- गुणवत्तापरक संकेत: बीज का आकार, रंग, स्थिरता, ताजगी और रोगमुक्त होना।
- बीज विशेष मौसम और समय में बोने की सिफारिश।

अनुप्रयोग आज: आधुनिक बीज उद्योग में बीज की गुणवत्ता परीक्षण और चयन तकनीकें इसी परंपरा से प्रेरित हैं।

2. बीज संरक्षण और भंडारण

- प्राचीन भारत में कुटीर विधि, जलाशय के पास भंडारण, और ताम्र पात्र/सूखी मिट्टी के पात्र में बीज संरक्षित किया जाता था।
- बीज को धूप और आर्द्रता से बचाने की विधियाँ भी बताई गई थीं।

अनुप्रयोग आज:

- आधुनिक बीज बैंक और कूल स्टोरेज तकनीक इसी सिद्धांत का विस्तारीकरण है।
 - बीज आयु बढ़ाने के लिए पारंपरिक और वैज्ञानिक विधियों का संयोजन।
-

3. बीज उपचार (SEED TREATMENT)

- बीज रोगों और कीटों से बचाने के लिए हर्बल उपचार और प्राकृतिक उपाय प्रचलित थे।
 - उदाहरण: नीम, हल्दी, तुलसी आदि का उपयोग बीज रोग निवारक के रूप में।
- बीज को प्राकृतिक उर्वरक और जैविक पदार्थ में भिगोकर रोग मुक्त किया जाता था।

अनुप्रयोग आज:

- बायोफर्टिलाइजर्स और बायोपेस्टीसाइड्स में पारंपरिक हर्बल उपायों का वैज्ञानिक रूपांतरण।
-

4. बीज वर्गीकरण और कृषि ज्ञान

- भारतीय ग्रंथों में बीज का वर्गीकरण उनकी बीज आकार, रंग, रूप, मौसम अनुरूपता और उत्पादन क्षमता के आधार पर किया गया।
- उदाहरण: वृक्षायुर्वेद में वृक्षों के बीज का वर्गीकरण उनके औषधीय और कृषि उपयोग के अनुसार।

अनुप्रयोग आज:

- विविधतावादी बीज बैंक और जेनेटिक संरक्षण।
 - बीजों के चयन में कृषि उपयुक्तता और आनुवंशिक गुणवत्ता का मूल्यांकन।
-

5. संकर बीज और उत्पादन तकनीक

- भारतीय परंपरा में संकर बीजों का प्रयोग सीमित रूप में हुआ, लेकिन बीजों को परंपरागत रूप से संकर और विशेष किस्मों के लिए चयनित किया जाता था।
- बीज की उच्च उत्पादकता और रोग प्रतिरोधक क्षमता सुनिश्चित करने पर जोर।

अनुप्रयोग आज:

- आधुनिक हाइब्रिड बीज उत्पादन और बीज प्रजनन प्रबंधन।

6. समय और मौसम आधारित कृषि ज्ञान

- बीज बोने का समय, वर्षा का अनुमान और मौसम आधारित सामयिक बीज बोवाई पर परंपरा आधारित ज्ञान।

- उदाहरण: वसंत और शरद ऋतु में विभिन्न फसलों के बीज बोने की प्रथा।

अनुप्रयोग आज:

- सटीक कृषि (Precision Agriculture) में मौसम और बीज बोने के समय का वैज्ञानिक उपयोग।

7. नैतिक और सामाजिक दृष्टिकोण

- बीज का आदर, समुदाय में बीज वितरण और साझा बीज बैंक जैसी प्रथाएँ।
- यह ज्ञान स्थायी कृषि और जैविक विविधता संरक्षण की नींव।

प्राचीन भारतीय कृषि साहित्य का परिचय

प्राचीन भारतीय कृषि साहित्य (Ancient Indian Agricultural Literature) भारतीय कृषि ज्ञान और प्रथाओं का अमूल्य स्रोत है। यह साहित्य केवल खेती की तकनीक तक सीमित नहीं, बल्कि बीज, मिट्टी, उर्वरक, फसल चक्र, रोग नियंत्रण, सिंचाई, मौसम और सामाजिक-आर्थिक पहलुओं का विस्तृत ज्ञान प्रदान करता है। नीचे इसका परिचय विस्तृत रूप में दिया गया है:

1. प्राचीन भारतीय कृषि साहित्य का महत्व

- यह साहित्य कृषि विज्ञान का प्रारंभिक आधार है।
- प्राकृतिक संसाधनों और पारंपरिक विधियों के संतुलित उपयोग पर जोर।
- स्थायी कृषि (Sustainable Agriculture) और बीज विज्ञान के सिद्धांतों का प्राचीन प्रमाण।
- फसल उत्पादन, बीज चयन, और पशुपालन के साथ सामाजिक और आर्थिक प्रबंधन पर भी प्रकाश।

2. प्रमुख प्राचीन कृषि ग्रंथ

(A) वृक्षायुर्वेद (VRIKSHAYURVEDA)

- लेखक: महर्षि पराशर, बाद में सुदर्शन आदि ने संशोधन किया।
- विषय:
 - पेड़ और पौधों की आयु, संरक्षण और रोग निवारण।
 - बीज का चयन, बोआई, सिंचाई, उर्वरक और कटाई।

- औषधीय और फसल वृक्षों का वर्गीकरण।
- **महत्व:** आज भी जैविक खेती और पौध संरक्षण तकनीक के लिए संदर्भ।

(B) अग्रकोष/कृषि कोष (KRISHI KOSHA)

- **विषय:** कृषि तकनीक, मिट्टी की गुणवत्ता, फसल चक्र और उर्वरक।
- बीज उत्पादन और खेती के लिए **सटीक समय और मौसम** का उल्लेख।

(C) भास्कराचार्य और अन्य ग्रंथ

- गणित और खगोल विज्ञान के माध्यम से **सिंचाई, वर्षा और फसल उत्पादन** का वैज्ञानिक विश्लेषण।

(D) आयुर्वेदिक ग्रंथों में कृषि

- **चरक संहिता और सुश्रुत संहिता** में औषधीय पौधों की खेती और बीज का महत्व।
- **औषधीय पौधों का चयन, बोवाई, और संरक्षण।**

(E) स्थानीय कृषि ग्रंथ

- विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में कृषि ज्ञान संकलित:
 - कुमारिल कृषि ग्रंथ (सौराष्ट्र)
 - कृषि व्याकरण (मध्य भारत)
 - क्षेत्रीय फसलों, बीज और उर्वरक विधियों का विवरण।

3. साहित्यिक विशेषताएँ

1. **व्यावहारिकता:** हर विधि का वास्तविक खेत में परीक्षण।
2. **संग्रहात्मक दृष्टि:** बीज, मिट्टी, जल, मौसम और रोग नियंत्रण का विस्तृत संग्रह।
3. **नैतिक और सामाजिक पहलू:** बीज और उत्पादन के आदान-प्रदान में ईमानदारी।
4. **पर्यावरणीय ज्ञान:** जल, मिट्टी और वनस्पति संरक्षण पर बल।

4. अवधारणा और दायरा

- प्राचीन कृषि साहित्य केवल **खेती तक सीमित नहीं**, बल्कि
 - बीज विज्ञान, फसल चक्र, उर्वरक, सिंचाई, कीट और रोग नियंत्रण,
 - पशुपालन, कृषि अर्थशास्त्र और सामाजिक प्रबंधन तक फैला।
- यह भारतीय ज्ञान परंपरा में कृषि को विज्ञान, कला और नैतिकता के संयोजन के रूप में प्रस्तुत करता है।

5. आधुनिक महत्व

- आज के बीज विज्ञान, जैविक खेती, कृषि यंत्र और फसल प्रबंधन में इन ग्रंथों से प्रेरणा ली जा रही है।
- **स्थायी कृषि और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण** में प्राचीन ग्रंथों की तकनीक उपयोगी।

महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का अवलोकन

कृषि पराशर ग्रंथ – विस्तृत विवरण

1. वृक्षायुर्वेद (VRIKSHAYURVEDA)

लेखक: महर्षि पराशर (कुछ विद्वान इसे वराहमिहिर से भी जोड़ते हैं)

मुख्य विषय: पौधों और फसलों की आयु, वृद्धि, बीज, रोग और कृषि तकनीकें।

विषयवस्तु:

1. बीज और बीज चयन:

- बीज को स्वस्थ, रोगमुक्त और मौसम के अनुसार चुना जाना चाहिए।
- बीज को भंडारण से पहले धूप, पानी और जमीनी गुणवत्ता के अनुसार तैयार करना।
- बीज की उम्र और गुणवत्ता पर आधारित बोवाई।

2. भूमि की तैयारी और उर्वरता:

- भूमि का चुनाव: जल निकासी, मिट्टी की बनावट और पोषक तत्वों के आधार पर।
- खाद और जैविक उर्वरक का प्रयोग।
- फसल चक्र: भूमि की थकावट रोकने के लिए फसल का अनुक्रम।

3. फसल और वृक्ष प्रबंधन:

- फसलों के बीच उपयुक्त दूरी।
- सिंचाई और मल जलन का सही समय।
- वृक्षों के लिए छंटाई, रोग निवारण और आयु बढ़ाने की तकनीक।

4. कीट और रोग प्रबंधन:

- प्राकृतिक और आयुर्वेदिक उपाय।
- फसल सुरक्षा के लिए मौसम और नक्षत्र पर आधारित संकेत।

2. कृषि ज्योतिष (KRISHI JYOTISH)

विषय: ग्रह, नक्षत्र और मौसम के अनुसार कृषि क्रियाएँ।

मुख्य सिद्धांत:

1. शुभ समय (Muhurta) में कृषि:

- फसल बोने, काटने, सिंचाई और खाद डालने के लिए उपयुक्त दिन और समय।
- ग्रह और नक्षत्र के अनुसार कार्य का परिणाम बेहतर होता है।

2. मौसम और ऋतु के अनुसार फसल:

- वसंत, ग्रीष्म, वर्षा और शरद ऋतु के लिए उपयुक्त फसल।
- मौसम परिवर्तन के अनुसार रोग और कीट नियंत्रण।

3. प्राकृतिक कारक:

- वर्षा, तापमान, भूमि नमी और सूर्य के अनुसार फसल चक्र।

- प्राकृतिक संतुलन बनाए रखना।

3. कृषि-सिद्धांत (KRISHI SIDDHANT)

विषय: कृषि विज्ञान और तकनीकी ज्ञान का मिश्रण।

प्रमुख बिंदु:

- **फसल चक्र और भूमि प्रबंधन:** भूमि की थकावट रोकने के लिए फसल चक्र अपनाना।
- **सिंचाई तकनीक:** जल संरक्षण और मौसम के अनुसार सिंचाई।
- **उर्वरक और खाद:** जैविक और खनिज उर्वरक का मिश्रण।
- **सुरक्षा उपाय:** फसल की सुरक्षा, रोग और कीट नियंत्रण।

कृषि पराशर ग्रंथों का महत्व

1. भारतीय कृषि परंपरा में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को जोड़ना।
2. बीज चयन और फसल प्रबंधन में आधुनिक तकनीकों के लिए आधार।
3. कृषि और ज्योतिष का मिश्रण, जो प्राकृतिक और मौसम आधारित खेती को बढ़ावा देता है।
4. आज भी शोध और प्राकृतिक खेती में संदर्भित।

मनसोल्लासा ग्रन्थ

मनसोल्लासा (Manasollasa), जिसे **अभिलाषितार्थ चिन्तामणि** भी कहा जाता है, 12वीं शताब्दी में कर्नाटक के कल्याणी चालुक्य वंश के राजा **सोमेश्वर तृतीय** द्वारा रचित संस्कृत का एक विशाल विश्वकोश है। यह ग्रंथ भारतीय संस्कृति, कला, विज्ञान, राजनीति, और समाज के विविध पहलुओं का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है।

ग्रंथ की संरचना

मनसोल्लासा को **पाँच खंडों** में विभाजित किया गया है, जिनमें कुल **100 अध्याय** हैं। प्रत्येक खंड में **20 अध्याय** होते हैं, जिन्हें **विंशति** (Vimsati) कहा जाता है। ये खंड निम्नलिखित हैं:

1. **राज्यप्राप्तिकरण** (Rajyapraṇtikāraṇa) – राज्य की प्राप्ति और शासन की योग्यताएँ।
2. **राज्यस्थैर्यकरण** (Rājyasya Sthairyakāraṇa) – राज्य की स्थिरता और प्रशासनिक व्यवस्था।
3. **भर्तृ उपभोगकरण** (Bhartur Upabhogakāraṇa) – राजा और उसके परिवार के भोग और सुख-सुविधाएँ।
4. **प्रमोदकरण** (Pramoda kāraṇa) – मनोरंजन, उत्सव और सांस्कृतिक गतिविधियाँ।
5. **क्रीड़ा विंशति** (Kṛīḍā vimśati) – खेल, युद्धकला और शारीरिक प्रशिक्षण।

विषयवस्तु का विविधता

मनसोल्लासा में निम्नलिखित प्रमुख विषयों का समावेश है:

1. राजनीति और प्रशासन

- **राज्य की स्थापना:** राज्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक योग्यताएँ और उपाय।
- **मंत्रियों की भूमिका:** मंत्रियों के चयन और उनके कार्य।
- **सेना और युद्धकला:** सेना की संरचना, प्रशिक्षण और युद्ध की रणनीतियाँ।

2. विज्ञान और गणित

- **गणना और अंकशास्त्र:** संख्याओं की गणना और उनके उपयोग।
- **ज्योतिष और खगोलशास्त्र:** ग्रहों की स्थिति और उनके प्रभाव।

3. कला और साहित्य

- **संगीत और नृत्य:** विभिन्न प्रकार के संगीत और नृत्य शैलियाँ।
- **चित्रकला और मूर्तिकला:** चित्र और मूर्तियों की रचना और उनके प्रकार।

4. भोजन और रचनाएँ

- **पाक कला:** विभिन्न प्रकार के व्यंजन और उनकी विधियाँ।
- **पेय पदार्थ:** पेयों की रचनाएँ और उनके उपयोग।

5. खेल और युद्धकला

- **खेलों का महत्व:** खेलों के प्रकार और उनके लाभ।
- **युद्धकला:** युद्ध की रणनीतियाँ और शारीरिक प्रशिक्षण।

आयुर्वेद में योगदान

मनसोल्लासा में आयुर्वेद के सिद्धांतों का विस्तृत वर्णन है:

- **आष्टांग आयुर्वेद:** वाग्भट के आष्टांग हृदय से संबंधित चिकित्सा पद्धतियाँ।
- **औषधियाँ और उपचार:** औषधियों के प्रकार, उनके उपयोग, रोगों का उपचार।
- **रोग निदान:** रोगों के लक्षण, निदान और उपचार विधियाँ।

सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व

मनसोल्लासा भारतीय मध्यकालीन समाज और संस्कृति का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। यह ग्रंथ न केवल शासन और प्रशासन की जानकारी प्रदान करता है, बल्कि उस समय की कला, साहित्य, भोजन, खेल और चिकित्सा पद्धतियों का भी विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है।

वृहत् संहिता (वराहमिहिरा) ग्रन्थ

वृहत् संहिता – परिचय

- **लेखक:** महर्षि वराहमिहिर (6ठी शताब्दी ईस्वी), जो प्राचीन भारत के महान ज्योतिषाचार्य और खगोलशास्त्री थे।
- **विषय:** ज्योतिष, खगोल, मौसम, समय, ग्रहों और नक्षत्रों का विज्ञान।
- **भाषा:** संस्कृत
- **काल:** 6ठी शताब्दी ईस्वी, गुर्जर प्रतिहार या मौर्य काल के आसपास

ग्रंथ की संरचना

वृहत् संहिता लगभग 1000 श्लोकों में विभाजित है और इसे विभिन्न अध्यायों में बांटा गया है। इसमें मुख्य विषय हैं:

- ग्रहों का ज्ञान (Graha Vidya):**
 - सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि और राहु-केतु का वर्णन।
 - ग्रहों की गति, प्रभाव और उनकी स्थिति के अनुसार फल।
- नक्षत्र और राशि शास्त्र:**
 - 27 नक्षत्र और 12 राशियों का वर्णन।
 - नक्षत्रों का मानव जीवन और प्रकृति पर प्रभाव।
- काल गणना (Time Calculation):**
 - वत्सर, मास, तिथि, योग और करण।
 - पंचांग और मुहूर्त निर्धारण।
- पूर्वानुमान (Prediction):**
 - जन्मपत्री (कुंडली) के आधार पर भविष्यवाणी।
 - राजाओं और आम जनता के लिए परिणाम।
- मौसम और प्राकृतिक संकेत:**
 - वर्षा, मौसम और प्राकृतिक आपदाओं का ज्योतिषीय विश्लेषण।
- शुभ-अशुभ समय:**
 - कार्य, विवाह, यात्रा, कृषि आदि के लिए शुभ मुहूर्त।

विशेषताएँ

- विस्तृत विवरण:** वराहमिहिर ने ग्रह, नक्षत्र, योग, तिथि और मुहूर्त का विज्ञान सरल और स्पष्ट रूप में बताया।
- प्रायोगिक दृष्टिकोण:** केवल सैद्धांतिक नहीं, बल्कि वास्तविक जीवन में ग्रहों और नक्षत्रों के प्रभाव पर आधारित।
- भविष्यवाणी का आधार:** कुंडली, जन्म तिथि और समय पर आधारित।
- कृषि, विवाह और सामाजिक कार्यों में उपयोग:** सही समय पर निर्णय लेने के लिए महत्वपूर्ण।

महत्व

- भारतीय ज्योतिषशास्त्र का स्तम्भ माना जाता है।
- मध्यकालीन और आधुनिक ज्योतिष के लिए आधारशिला।
- खगोलशास्त्र, मौसम विज्ञान और पंचांग निर्माण में आज भी संदर्भ ग्रंथ।

कश्यपिया कृषि सूक्ति ग्रन्थ

काश्यपीय कृषिसूक्ति (Kashyapiya Krishi Sukti) एक प्राचीन भारतीय कृषि ग्रंथ है, जो महर्षि कश्यप के कृषि ज्ञान और सिद्धांतों पर आधारित है। यह ग्रंथ किसानों को प्राचीन ज्ञान और व्यावहारिक सुझावों से समृद्ध करता है, जो आज की खेती में भी उपयोगी हैं।

काश्यपीय कृषिसूक्ति की प्रमुख विशेषताएँ:

- **मिट्टी प्रबंधन:** भूमि की उर्वरता और संरचना सुधारने के उपाय।
- **फसल चयन:** भूमि और जलवायु के अनुसार फसल का चुनाव।
- **बीज उपचार:** स्वस्थ अंकुरण हेतु पारंपरिक विधियाँ।
- **जैविक उर्वरक:** प्राकृतिक खाद से भूमि का पोषण।
- **कीट एवं रोग नियंत्रण:** पर्यावरण-सुरक्षित प्राचीन उपाय।
- **फसल कटाई तकनीक:** पैदावार बढ़ाने और गुणवत्ता बनाए रखने के तरीके।

यह पुस्तक किसानों और कृषि प्रेमियों के लिए टिकाऊ खेती और प्राकृतिक कृषि पद्धतियों को अपनाने का एक अनमोल मार्गदर्शक है।

ग्रंथ की संरचना और विषयवस्तु

काश्यपीय कृषिसूक्ति में कृषि के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है:

- **भूमि और जलवायु:** कृषि के लिए उपयुक्त भूमि और जलवायु की पहचान।
- **बीज और फसल चक्र:** उत्तम बीजों का चयन और फसल चक्र की योजना।
- **सिंचाई प्रणाली:** जल स्रोतों का प्रबंधन और सिंचाई विधियाँ।
- **पशुपालन:** पशुओं की देखभाल, आहार, और प्रजनन।
- **औषधीय पौधे:** कृषि में उपयोग होने वाले औषधीय पौधों की जानकारी।

यह ग्रंथ कृषि को एक समग्र दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है, जिसमें पर्यावरण, समाज, और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

वृक्षायुर्वेद (सुपाल)ग्रन्थ विस्तृत जानकारी

CHATGPT SAID:

वृक्षायुर्वेद एक प्राचीन संस्कृत ग्रंथ है, जिसे वैद्य **सुरपाल** ने लगभग 1000 वर्ष पूर्व रचा था। यह ग्रंथ वृक्षों के स्वास्थ्यपूर्ण विकास, संरक्षण, और उपचार से संबंधित है। वृक्षायुर्वेद का उद्देश्य वृक्षों की दीर्घायु और समृद्धि सुनिश्चित करना है, ताकि पर्यावरण संतुलन बना रहे और मानवता को लाभ हो।

ग्रंथ की संरचना और विषयवस्तु

वृक्षायुर्वेद की पांडुलिपि देवनागरी के प्राचीन रूप वाली लिपि में लिखी गई है। इसमें कुल ६० पृष्ठों में ३२५ श्लोक हैं, जो विभिन्न विषयों पर विस्तृत जानकारी प्रदान करते हैं। प्रमुख विषय इस प्रकार हैं:

1. **बीजोत्पत्ति काण्ड:** इसमें बीज के उत्पत्ति, विकास और अंकुरण की प्रक्रिया का वर्णन है।
2. **वनस्पति काण्ड:** यहां विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों और उनके गुणों का उल्लेख किया गया है।
3. **गुल्म-क्षुप काण्ड:** झाड़ियों और छोटे पौधों के बारे में जानकारी प्रदान की गई है।
4. **विरुद-वृक्ष काण्ड:** विभिन्न वृक्षों के नाम और उनके गुणों का वर्णन है।
5. **चिकित्सा काण्ड:** वृक्षों के रोगों, उनके लक्षण और उपचार विधियों का विवरण है।

🌿 वृक्षायुर्वेद का महत्व

वृक्षायुर्वेद में वृक्षों के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है:

- **भूमि चयन और तैयारी:** किस प्रकार की भूमि वृक्षारोपण के लिए उपयुक्त है और उसे कैसे तैयार किया जाए।
- **बीज उपचार और रोपण विधि:** बीजों का चयन, उनका उपचार और रोपण की सही विधि।
- **सिंचाई और पोषण:** वृक्षों को उचित जल और पोषण प्रदान करने के उपाय।
- **रोग और कीट नियंत्रण:** वृक्षों में लगने वाले रोगों और कीटों का पहचान और उनका उपचार।
- **वृक्षों की देखभाल और संरक्षण:** वृक्षों की दीर्घायु और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक देखभाल।

उपलब्धता और अध्ययन

वृक्षायुर्वेद की पांडुलिपि यूके के बोल्डियन पुस्तकालय (ऑक्सफोर्ड) से प्राप्त की गई थी। डॉ. नलिनी साधले ने इसका अंग्रेजी में अनुवाद किया है, जिससे यह ग्रंथ अधिक लोगों तक पहुंच सका है।

उपवनविनोद (शारंगधर) ग्रन्थ विस्तृत जानकारी

उपवनविनोद (Upavan Vinod) एक महत्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथ है, जिसे **आचार्य शारंगधर** ने रचा था। यह ग्रंथ विशेष रूप से बागवानी और वृक्षों की देखभाल से संबंधित है, और इसे भारतीय कृषि साहित्य में एक अमूल्य धरोहर माना जाता है।

ग्रंथ का महत्व और रचनाकाल

- **रचनाकाल:** उपवनविनोद की रचना लगभग 12वीं शताब्दी में हुई थी।
 - **रचनाकार:** आचार्य शारंगधर, जो आयुर्वेदाचार्य के रूप में प्रसिद्ध हैं, ने इस ग्रंथ की रचना की।
 - **विषयवस्तु:** यह ग्रंथ बागवानी, वृक्षों की देखभाल, मिट्टी की गुणवत्ता, सिंचाई, उर्वरक, रोग नियंत्रण, और पौधों के पोषण से संबंधित है।
-

उपवनविनोद के प्रमुख विषय

1. **भूमि और मिट्टी का चयन:** किस प्रकार की भूमि और मिट्टी पौधों के लिए उपयुक्त हैं, इसका विस्तृत वर्णन।
2. **बीजोत्पत्ति और रोपण विधि:** बीजों का चयन, उनका उपचार और सही विधि से रोपण के उपाय।
3. **सिंचाई और जल प्रबंधन:** वृक्षों के लिए उचित जल आपूर्ति और सिंचाई की विधियाँ।
4. **उर्वरक और पोषण:** प्राकृतिक और जैविक उर्वरकों का उपयोग और पौधों के पोषण की विधियाँ।
5. **रोग और कीट नियंत्रण:** पौधों में लगने वाले रोगों और कीटों का पहचान और उनका उपचार।
6. **वृक्षों की देखभाल और संरक्षण:** वृक्षों की दीर्घायु और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक देखभाल।

उपवनविनोद की उपलब्धता

उपवनविनोद की पांडुलिपियाँ विभिन्न पुस्तकालयों और संग्रहालयों में उपलब्ध हैं। कुछ प्रमुख प्रकाशनों में इस ग्रंथ का हिंदी और संस्कृत संस्करण प्रकाशित किया गया है। आप इसे प्रमुख पुस्तक विक्रेताओं या ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से प्राप्त कर सकते हैं।

आधुनिक संदर्भ में उपवनविनोद

आज के समय में, जब जैविक और प्राकृतिक खेती की ओर रुझान बढ़ रहा है, उपवनविनोद जैसे प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन और अनुसरण अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है। इसमें दिए गए उपाय न केवल पर्यावरण के अनुकूल हैं, बल्कि वृक्षों की दीर्घायु और उत्पादकता भी बढ़ाते हैं।

यूनिट - 02

पुष्प का अध्ययन -

- पुष्प की संरचना -

पुष्प (Flower) आवृतबीजी पौधों का **प्रजनन अंग** है। यह एक **परिवर्तित शाखा (Modified shoot)** होता है, जिसमें लैंगिक प्रजनन की प्रक्रिया सम्पन्न होती है।

पुष्प का सामान्य परिचय

- **पुष्प** एक परिवर्तित शाखा (Modified shoot) है।
- यह सामान्यतः **पुष्पासन (Thalamus / Receptacle)** पर विकसित होता है।
- पुष्प का डंठल **पुष्पदण्ड (Pedicel)** कहलाता है।

2 पुष्प के मुख्य भाग (WHORLS OF FLOWER)

(A) बाह्य मंडल (ACCESSORY WHORLS)

1. दलपुंज (CALYX)

- यह पुष्प का सबसे बाहरी मंडल होता है।
- इसमें दल (Sepals) होते हैं।
- सामान्यतः हरे रंग के होते हैं।
- कार्य:
 - कली की रक्षा करना
 - प्रकाश संश्लेषण में सहायता

प्रकार

- संयुक्तदलपुंज (Gamosepalous) – दल आपस में जुड़े होते हैं
- मुक्तदलपुंज (Polysepalous) – दल स्वतंत्र होते हैं

2. पंखुड़ी मंडल (COROLLA)

- इसमें पंखुड़ियाँ (Petals) होती हैं।
- रंगीन व सुगंधित होती हैं।
- कार्य:
 - कीटों को आकर्षित करना (परागण हेतु)

प्रकार

- संयुक्त पंखुड़ी (Gamopetalous)
- मुक्त पंखुड़ी (Polypetalous)

3 आंतरिक मंडल (ESSENTIAL WHORLS)

3. पुंकेसर मंडल (ANDROECIUM)

- यह नर प्रजनन अंग है।
- इसमें पुंकेसर (Stamens) होते हैं।

पुंकेसर के भाग

1. तंतु (Filament)
2. परागकोष (Anther) – इसमें परागकण बनते हैं

कार्य

- नर युग्मक (Male gametes) का निर्माण
-

4. स्त्रीकेसर मंडल (GYNOECIUM)

- यह मादा प्रजनन अंग है।
- इसमें अंडप (Carpel / Pistil) होते हैं।

अंडप के भाग

1. वर्तिकाग्र (Stigma) – पराग ग्रहण करता है
2. वर्तिका (Style) – पराग नली का मार्ग
3. अंडाशय (Ovary) – बीजांड होते हैं

कार्य

- निषेचन के बाद बीज एवं फल का निर्माण
-

4 पुष्पासन (THALAMUS)

- सभी मंडल इसी पर लगे होते हैं।
 - इसके प्रकार:
 - उत्तल (Convex)
 - अवतल (Concave)
 - समतल (Flat)
-

5 पुष्प के आधार पर वर्गीकरण

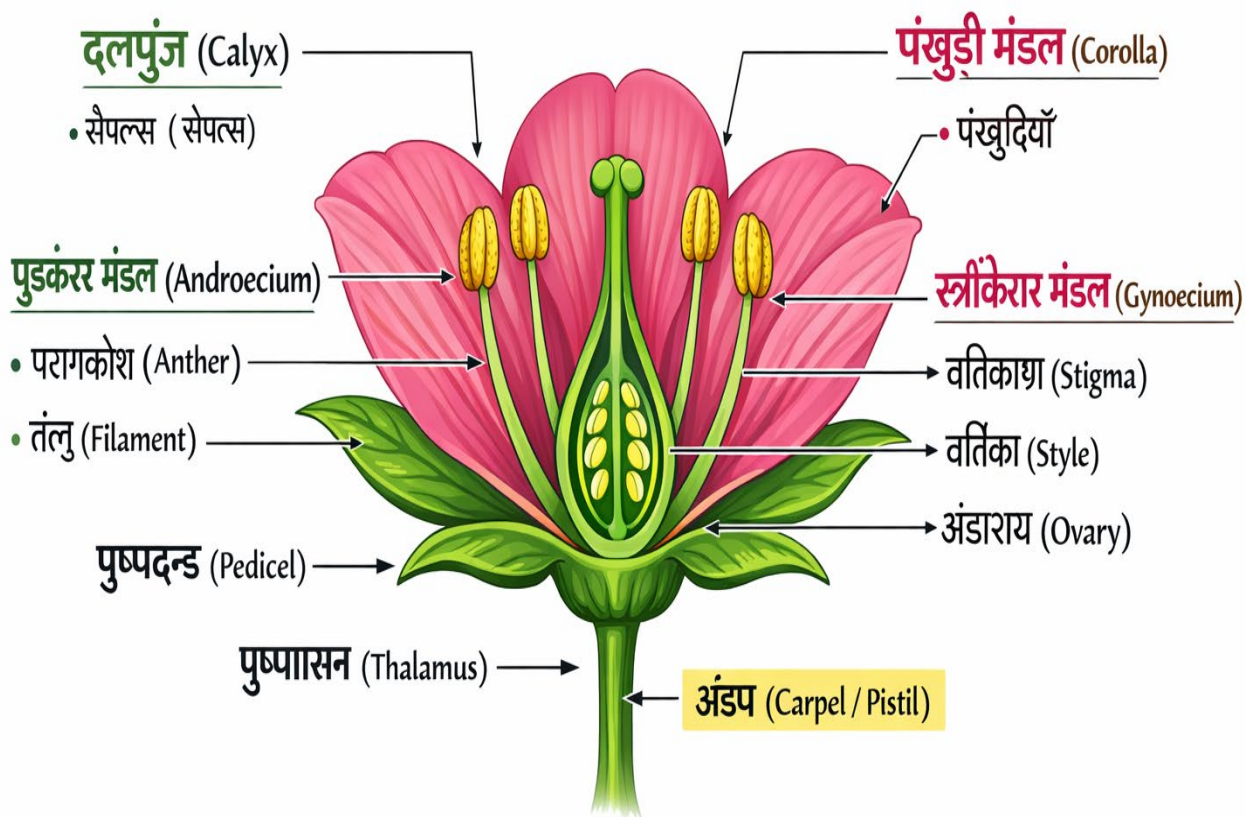
(A) लैंगिकता के आधार पर

- द्विलिंगी पुष्प – नर व मादा दोनों अंग उपस्थित
- एकलिंगी पुष्प – केवल नर या मादा अंग

(B) सममिति के आधार पर

- त्रिज्य सममित (Actinomorphic)
- एकाक्ष सममित (Zygomorphic)
- असममित (Asymmetric)

पुष्प की संरचना



02- भारतीय परिपेक्ष में फूलों का महत्त्व-

भारतीय परिप्रेक्ष्य में फूलों का महत्त्व

भारत में फूलों का महत्व केवल प्राकृतिक सौंदर्य तक सीमित नहीं है, बल्कि यह धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, औषधीय और आर्थिक जीवन से गहराई से जुड़ा हुआ है।

1 धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व

- भारत में लगभग सभी धर्मों में फूलों का प्रयोग होता है।
 - पूजा-अर्चना, यज्ञ, हवन, व्रत, त्यौहार में फूल अनिवार्य हैं।
 - कमल – लक्ष्मी एवं ब्रह्मा का प्रतीक
 - तुलसी – विष्णु से संबंधित (हालाँकि यह पौधा है, फूल भी पवित्र माने जाते हैं)
 - गेंदा, गुलाब, चमेली – मंदिरों में व्यापक उपयोग
-

2 सांस्कृतिक एवं सामाजिक महत्व

- विवाह, नामकरण, गृहप्रवेश, उत्सव आदि में फूलों का प्रयोग
 - मालाएँ, तोरण, सजावट में फूलों का उपयोग
 - अतिथियों का स्वागत फूल देकर किया जाता है
-

3 औषधीय महत्व

- आयुर्वेद में कई फूल औषधि के रूप में प्रयुक्त होते हैं—
 - गुलाब – शीतल, पाचन में सहायक
 - चमेली – मानसिक शांति
 - कमल – हृदय एवं रक्त संबंधी रोगों में उपयोग
-

4 आर्थिक महत्व

- फूलों की खेती (फ्लोरीकल्चर) से लाखों लोगों को रोजगार
 - मंदिरों, विवाह, सजावट, इत्र उद्योग में उपयोग
 - गुलाब, रजनीगंधा, गेंदा की व्यावसायिक खेती
-

5 पर्यावरणीय महत्व

- परागण में सहायता कर जैव विविधता बनाए रखते हैं
 - मधुमक्खियों व कीटों के लिए भोजन का स्रोत
 - पर्यावरण को सुंदर व संतुलित बनाते हैं
-

6 साहित्य एवं कला में महत्व

- भारतीय साहित्य, कविता, चित्रकला व नृत्य में फूलों का वर्णन
- फूल सौंदर्य, कोमलता और भावना के प्रतीक हैं

साहित्य में महत्व

- साहित्य समाज का दर्पण होता है।
- कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि में मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति।
- प्रेम, करुणा, वीरता, भक्ति, सौंदर्य जैसे भावों को सजीव रूप देता है।
- संस्कृत, हिंदी, उर्दू आदि भारतीय भाषाओं में साहित्य ने संस्कृति को संरक्षित किया।

कला में महत्व

- कला सौंदर्य की दृश्य अभिव्यक्ति है।
 - चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत, नृत्य, वास्तुकला आदि इसके रूप हैं।
 - कला भावनाओं को बिना शब्दों के व्यक्त करने की शक्ति रखती है।
 - भारतीय कला (अजंता-एलोरा, भरतनाट्यम, राग संगीत) विश्वप्रसिद्ध है।
-

7 समाज और संस्कृति में भूमिका

- साहित्य और कला सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण करते हैं।
 - सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार और सुधार की प्रेरणा देते हैं।
 - राष्ट्रीय एकता और चेतना को मजबूत करते हैं।
-

शिक्षा एवं व्यक्तित्व विकास में महत्व

- रचनात्मक सोच और कल्पनाशक्ति का विकास

- नैतिक मूल्यों और संवेदनशीलता का निर्माण
 - व्यक्तित्व को संतुलित और संस्कारित बनाते हैं
-

03 परिचय और परिभाषा -

1. पुष्प का परिचय (INTRODUCTION OF FLOWER)

पुष्प आवृतबीजी पौधों (Angiosperms) का सबसे महत्वपूर्ण प्रजनन अंग है। पौधों के जीवन-चक्र में पुष्प का विशेष स्थान है, क्योंकि इसी के माध्यम से परागण, निषेचन, बीज निर्माण तथा फल निर्माण की प्रक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं।

वनस्पति विज्ञान के अनुसार पुष्प एक परिवर्तित शाखा (Modified Shoot) है, जिसमें पत्तियाँ परिवर्तित होकर विभिन्न मंडलों (दल, पंखुड़ी, पुंकेसर एवं अंडप) का निर्माण करती हैं। सामान्य शाखा की तरह इसमें भी पर्व (Nodes) और अंतरपर्व (Internodes) होते हैं, परंतु ये अत्यंत संकुचित होते हैं।

पुष्प प्रायः रंगीन, सुगंधित एवं आकर्षक होता है। इसका मुख्य उद्देश्य परागण कारकों (कीट, वायु, जल आदि) को आकर्षित कर लैंगिक प्रजनन को सफल बनाना है। यही कारण है कि पुष्प को पौधों की प्रजनन इकाई कहा जाता है।

2. पुष्प की वैज्ञानिक एवं जैविक विशेषताएँ

- पुष्प केवल आवृतबीजी पौधों में पाया जाता है।
 - इसमें नर (पुंकेसर) और मादा (स्त्रीकेसर) प्रजनन अंग उपस्थित होते हैं।
 - निषेचन के बाद पुष्प के भाग परिवर्तित होकर फल एवं बीज का निर्माण करते हैं।
 - पुष्प पौधों की वंश वृद्धि (Continuation of species) में सहायक होता है।
-

3. पुष्प का संरचनात्मक विश्लेषण (संक्षेप संकेत)

पुष्प सामान्यतः चार मंडलों से मिलकर बना होता है—

1. दलपुंज (Calyx) – सुरक्षा
2. पंखुड़ी मंडल (Corolla) – आकर्षण
3. पुंकेसर मंडल (Androecium) – नर युग्मक निर्माण
4. स्त्रीकेसर मंडल (Gynoecium) – मादा युग्मक, बीज निर्माण

इन सभी मंडलों का आधार **पुष्पासन (Thalamus)** होता है।

4. पुष्प का जैविक एवं व्यावहारिक महत्व

- पौधों में लैंगिक प्रजनन संभव बनाता है
 - जैव विविधता बनाए रखता है
 - फल, बीज एवं कृषि उत्पादन का आधार
 - मानव जीवन में धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्व
-

5. पुष्प की परिभाषा (DEFINITION OF FLOWER)

“पौधों का वह परिवर्तित प्रजननशील अंग, जिसमें नर एवं मादा प्रजनन संरचनाएँ पाई जाती हैं तथा जिसके निषेचन के बाद फल एवं बीज का निर्माण होता है, उसे पुष्प कहते हैं।”

04 पुष्प के भाग (वानस्पतिक और प्रजनात्मक)

पुष्प के भाग (वानस्पतिक एवं प्रजनात्मक) 

पुष्प आवृतबीजी पौधों का प्रजनन अंग है। इसके भागों को उनके कार्य के आधार पर **दो वर्गों** में बाँटा जाता है—

1 वानस्पतिक (सहायक) भाग

2 प्रजनात्मक (आवश्यक) भाग

1. वानस्पतिक भाग (VEGETATIVE / ACCESSORY PARTS)

ये भाग सीधे प्रजनन में भाग नहीं लेते, परंतु पुष्प की **सुरक्षा एवं सहायता** करते हैं।

(क) दलपुंज (CALYX)

- इसमें **दल (Sepals)** होते हैं
- सामान्यतः हरे रंग के
- कार्य:
 - पुष्प कली की रक्षा

- प्रकाश संश्लेषण में सहायक

(ख) पंखुड़ी मंडल (COROLLA)

- इसमें पंखुड़ियाँ (Petals) होती हैं
- रंगीन एवं सुगंधित
- कार्य:
 - कीटों को आकर्षित करना
 - परागण में सहायता

◆ 2. प्रजनात्मक भाग (REPRODUCTIVE / ESSENTIAL PARTS)

ये भाग प्रजनन की मुख्य क्रियाओं में भाग लेते हैं।

(क) पुंकेसर मंडल (ANDROECIUM) — नर भाग

- पुष्प का नर प्रजनन अंग
- इसमें पुंकेसर (Stamens) होते हैं

पुंकेसर के भाग

1. तंतु (Filament)
2. परागकोष (Anther) – परागकण बनते हैं

कार्य

- नर युग्मक का निर्माण

(ख) स्त्रीकेसर मंडल (GYNOECIUM) — मादा भाग

- पुष्प का मादा प्रजनन अंग
- इसमें अंडप (Carpel/Pistil) होते हैं

अंडप के भाग

- 1. **वर्तिकाग्र (Stigma)** – पराग ग्रहण
- 2. **वर्तिका (Style)** – परागनली का मार्ग
- 3. **अंडाशय (Ovary)** – बीजांड स्थित

कार्य

- मादा युग्मक का निर्माण
- निषेचन के बाद बीज एवं फल का निर्माण

सारांश तालिका

भागों का प्रकार	नाम	कार्य
वानस्पतिक	दलपुंज	सुरक्षा
वानस्पतिक	पंखुड़ी मंडल	आकर्षण
प्रजनात्मक	पुंकेसर मंडल	नर युग्मक
प्रजनात्मक	स्त्रीकेसर मंडल	मादा युग्मक

05- पुष्प के कार्य -

पुष्प के कार्यों का सम्पूर्ण विश्लेषण

पुष्प आवृतबीजी पौधों का **प्रमुख प्रजनन अंग** है। इसके कार्य केवल प्रजनन तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह संरचनात्मक, जैविक, पारिस्थितिक और आर्थिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। नीचे पुष्प के कार्यों का विस्तृत एवं क्रमबद्ध विश्लेषण प्रस्तुत है—

1. प्रजनन से संबंधित कार्य (REPRODUCTIVE FUNCTIONS)

1 नर एवं मादा युग्मकों का निर्माण

- **पुंकेसर (Androecium)** में परागकोष द्वारा **परागकण (नर युग्मक)** बनते हैं।
- **स्त्रीकेसर (Gynoecium)** में अंडाशय के भीतर **बीजांड** स्थित होते हैं, जिनमें मादा युग्मक बनता है।

2 परागण में सहायता

- पुष्प की **रंगीन पंखुड़ियाँ, सुगंध, मधुरस (Nectar)** कीटों, पक्षियों एवं अन्य परागण कारकों को आकर्षित करती हैं।
 - इससे परागकण एक पुष्प से दूसरे पुष्प तक पहुँचते हैं।
-

3 निषेचन की प्रक्रिया

- वर्तिकाग्र पर पहुँचा परागकण **परागनली** बनाता है।
 - परागनली के माध्यम से नर युग्मक बीजांड तक पहुँचकर निषेचन करते हैं।
 - यह प्रक्रिया पुष्प में ही सम्पन्न होती है।
-

4 बीज एवं फल का निर्माण

- निषेचन के बाद—
 - **अंडाशय** → **फल** में परिवर्तित हो जाता है
 - **बीजांड** → **बीज** बन जाता है
 - यह पौधों की वंश वृद्धि का आधार है।
-

2. संरक्षण एवं सहायता से जुड़े कार्य

5 कली की सुरक्षा

- **दलपुंज (Calyx)** पुष्प की कली अवस्था में उसकी रक्षा करता है।
-

6 परागण की सफलता बढ़ाना

- पुष्प की विशेष आकृति, रंग और गंध परागण को अधिक प्रभावी बनाते हैं।
-

3. जैविक एवं पारिस्थितिक कार्य

7 जैव विविधता बनाए रखना

- लैंगिक प्रजनन से नए गुणों का समावेश होता है।
 - इससे पौधों में अनुकूलन क्षमता बढ़ती है।
-

8 खाद्य श्रृंखला में योगदान

- पुष्प मधुमक्खी, तितली, पक्षी आदि के लिए भोजन का स्रोत है।
 - इससे पारिस्थितिकी संतुलन बना रहता है।
-

4. मानव जीवन से संबंधित कार्य

9 आर्थिक महत्व

- फूलों की खेती (Floriculture) से रोजगार
 - इत्र, सजावट, पूजा एवं सौंदर्य प्रसाधन उद्योग
-

औषधीय एवं सांस्कृतिक महत्व

- आयुर्वेद में कई फूल औषधि के रूप में उपयोगी
 - धार्मिक एवं सामाजिक अनुष्ठानों में अनिवार्य
-

5. शैक्षणिक एवं सौंदर्यात्मक कार्य

11 सौंदर्य एवं मानसिक शांति

- फूल प्रकृति की शोभा बढ़ाते हैं।
 - मानसिक तनाव को कम करते हैं।
-

12 वैज्ञानिक अध्ययन में सहायक

- पुष्प का अध्ययन वर्गीकरण, अनुवांशिकी एवं विकासक्रम समझने में सहायक।
-

यूनिट -03

आवृतबीजियों की भ्रूण-

01 लघुबीजाणुजनन एवं लघुबीजाणुधानी -

लघुबीजाणुजनन एवं लघुबीजाणुधानी पुष्पीय पौधों में नर प्रजनन (Male Reproduction) से संबंधित अत्यंत महत्वपूर्ण विषय हैं। इन प्रक्रियाओं के द्वारा परागकण (Pollen grains) का निर्माण होता है, जो आगे चलकर नर युग्मक उत्पन्न करते हैं।

भाग-1 : लघुबीजाणुधानी (MICROSPORANGIUM)

1 परिभाषा

परागकोष (Anther) के भीतर स्थित वह संरचना जिसमें लघुबीजाणुओं का निर्माण होता है, लघुबीजाणुधानी कहलाती है।

2 स्थिति एवं संख्या

- लघुबीजाणुधानी परागकोष में पाई जाती है।
- सामान्यतः एक परागकोष द्विकोषीय (Dithedrous) होता है।
- प्रत्येक परागकोष में चार लघुबीजाणुधानियाँ होती हैं।

3 लघुबीजाणुधानी की संरचना

(क) भित्ति (WALL) की परतें

लघुबीजाणुधानी की भित्ति चार परतों से बनी होती है—

1. एपिडर्मिस (Epidermis)
 - सबसे बाहरी परत
 - सुरक्षा प्रदान करती है
2. एंडोथेसियम (Endothecium)
 - कोशिकाएँ मोटी एवं रेशेदार
 - परागकोष के फटने (Dehiscence) में सहायक

3. मध्य परतें (Middle Layers)

- 2-3 परतें
- परिपक्वता पर नष्ट हो जाती हैं

4. टैपेटम (Tapetum)

- सबसे भीतरी परत
- परागकणों को पोषण देती है
- इसमें बहुनाभिकीय कोशिकाएँ होती हैं

(ख) आंतरिक भाग

- लघुबीजाणु जनक कोशिकाएँ (Microspore Mother Cells – MMCs)
- ये द्विगुणित ($2n$) होती हैं
- इन्हीं से लघुबीजाणु बनते हैं

भाग-2 : लघुबीजाणुजनन (MICROSPOROGENESIS)

1 परिभाषा

लघुबीजाणु जनक कोशिकाओं में अर्धसूत्री विभाजन (Meiosis) द्वारा लघुबीजाणुओं के निर्माण की प्रक्रिया को लघुबीजाणुजनन कहते हैं।

2 स्थान

- लघुबीजाणुजनन लघुबीजाणुधानी के भीतर होता है।

3 प्रक्रिया का विस्तृत वर्णन

1. प्रत्येक MMC द्विगुणित ($2n$) होती है।
2. MMC में अर्धसूत्री विभाजन होता है।
3. इस विभाजन से चार हैप्लॉइड (n) लघुबीजाणु बनते हैं।
4. ये चारों लघुबीजाणु टेट्रेड (Tetrad) अवस्था में रहते हैं।
5. परिपक्वता पर ये अलग होकर स्वतंत्र परागकण बन जाते हैं।

4 लघुबीजाणुओं का भविष्य

- प्रत्येक लघुबीजाणु → परागकण (Pollen grain)
- परागकण → नर युग्मकोद्भिद (Male gametophyte)

परागकण की संक्षिप्त संरचना (संदर्भ हेतु)

- बाह्य भित्ति : एक्साइन (Exine)
- आंतरिक भित्ति : इन्टाइन (Intine)
- अंकुरण रंध्र (Germ pore)

लघुबीजाणुधानी एवं लघुबीजाणुजनन में अंतर

आधार	लघुबीजाणुधानी	लघुबीजाणुजनन
प्रकृति	संरचना	प्रक्रिया
स्थान	परागकोष में	लघुबीजाणुधानी में
कार्य	MMC को धारण करना	लघुबीजाणु बनाना
प्रकार	शारीरिक	जैविक

जैविक महत्व (BIOLOGICAL IMPORTANCE)

- नर युग्मक निर्माण का आधार
- लैंगिक प्रजनन संभव बनाता है
- आनुवंशिक विविधता में वृद्धि
- पौधों की वंश वृद्धि सुनिश्चित करता है

02 संरचना (विशिष्ट परागकोष का त्रैतियक काट)-

संरचना : विशिष्ट परागकोष का त्रैतीयक काट (T.S. OF TYPICAL ANTHER) — सम्पूर्ण विश्लेषण

विशिष्ट परागकोष का त्रैतीयक काट (Transverse Section) पुष्पीय पौधों में नर प्रजनन अंग की आंतरिक संरचना को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। यह अध्ययन लघुबीजाणुधानी, लघुबीजाणुजनन तथा परागकण निर्माण को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

1. विशिष्ट परागकोष का सामान्य परिचय

- परागकोष पुंकेसर (Stamen) का ऊपरी, फूला हुआ भाग होता है।
- सामान्यतः यह द्विकोषीय (Dithecous) होता है।
- प्रत्येक कोष (Theca) में दो लघुबीजाणुधानियाँ (Microsporangia) होती हैं।
✍ इस प्रकार एक परागकोष में कुल चार लघुबीजाणुधानियाँ पाई जाती हैं।

2. त्रैतीयक काट में दिखाई देने वाली संरचनाएँ

विशिष्ट परागकोष के T.S. में निम्नलिखित मुख्य भाग दिखाई देते हैं—

(A) परागकोष भित्ति (ANTHER WALL)

परागकोष की भित्ति चार स्पष्ट परतों से बनी होती है, जो बाहर से अंदर की ओर क्रमबद्ध रहती हैं—

1 एपिडर्मिस (EPIDERMIS)

- सबसे बाहरी एकल परत
- कोशिकाएँ पतली भित्ति वाली एवं सघन
- मुख्य कार्य:
 - परागकोष की सुरक्षा
 - आंतरिक भागों को बाहरी प्रभाव से बचाना

2 एंडोथेसियम (ENDOTHECIUM)

- एपिडर्मिस के ठीक नीचे स्थित
 - कोशिकाओं की भित्तियों में रेशेदार मोटापन (Fibrous thickening) पाया जाता है
 - मुख्य कार्य:
 - परागकोष के फटने (Dehiscence) में सहायता
 - परागकणों की मुक्ति सुनिश्चित करना
-

3 मध्य परतें (MIDDLE LAYERS)

- सामान्यतः 2-3 कोशिकीय परतें
 - अल्पकालिक (Temporary) होती हैं
 - परागकोष की परिपक्वता के साथ ये परतें नष्ट हो जाती हैं
 - मुख्य कार्य:
 - विकसित हो रहे परागकणों को अस्थायी पोषण देना
-

4 टैपेटम (TAPETUM)

- सबसे भीतरी एवं सबसे महत्वपूर्ण परत
- कोशिकाएँ बड़ी, घनी, बहुनाभिकीय या बहुगुणित (Polyploid)
- मुख्य कार्य:
 - लघुबीजाणुओं एवं परागकणों को पोषण प्रदान करना
 - परागभित्ति (Exine) के निर्माण में सहायक पदार्थ देना

टैपेटम को परागकणों की नर्सरी भी कहा जाता है।

(B) लघुबीजाणुघानी (MICROSPORANGIUM)

- परागकोष भित्ति के भीतर स्थित
- इसमें पाए जाते हैं—
 - लघुबीजाणु जनक कोशिकाएँ (MMC) – प्रारंभिक अवस्था में
 - अथवा विकसित अवस्था में लघुबीजाणु / परागकण

MMC द्विगुणित ($2n$) होती हैं और इनमें अर्धसूत्री विभाजन होता है।

C) संयोजी ऊतक (CONNECTIVE TISSUE)

- दोनों कोशों के मध्य स्थित
 - इसमें उपस्थित होता है—
 - **संवहनी बंडल (Vascular Bundle)**
 - कार्य:
 - परागकोष को **पोषण एवं जल** की आपूर्ति
-

3. परागकोष का परिपक्वन एवं फटन (DEHISCENCE)

- MMC → अर्धसूत्री विभाजन → चार हैप्लॉइड लघुबीजाणु
 - ये लघुबीजाणु परागकण में विकसित होते हैं
 - परिपक्व अवस्था में—
 - मध्य परतें नष्ट हो जाती हैं
 - टैपेटम क्षय हो जाता है
 - एंडोथीसियम के संकुचन से
 - **स्टोमियम (Stomium)** क्षेत्र से परागकोष फट जाता है
 - परागकण बाहर निकल जाते हैं
-

4. परीक्षा हेतु प्रमुख लेबल

- Epidermis
 - Endothecium
 - Middle layers
 - Tapetum
 - Microsporangium
 - MMC / Pollen grains
 - Connective tissue
 - Vascular bundle
 - Stomium
-

03 लघुबीजाणु एवं नर युग्मोद्भिद का विकास *-

लघुबीजाणु एवं नर युग्मोद्भिद का विकास — सम्पूर्ण विस्तृत विश्लेषण

पुष्पीय पौधों (Angiosperms) में नर प्रजनन की प्रक्रिया दो मुख्य चरणों में पूर्ण होती है—

1 लघुबीजाणु का निर्माण

2 नर युग्मोद्भिद (Male Gametophyte) का विकास

इन दोनों प्रक्रियाओं के माध्यम से अंततः नर युग्मक (Male gametes) बनते हैं।

भाग-1 : लघुबीजाणु (MICROSPORE) का विकास

1. लघुबीजाणु का परिचय

- लघुबीजाणु एक हैप्लॉइड (n) कोशिका होती है।
- यह परागकोष की लघुबीजाणुधानी में बनती है।
- आगे चलकर यही लघुबीजाणु परागकण में विकसित होती है।

2. लघुबीजाणु का निर्माण (MICROSPOROGENESIS)

1. लघुबीजाणु जनक कोशिकाएँ (MMC) द्विगुणित ($2n$) होती हैं।
2. MMC में अर्धसूत्री विभाजन (Meiosis) होता है।
3. इसके परिणामस्वरूप चार हैप्लॉइड लघुबीजाणु बनते हैं।
4. ये चारों मिलकर टेट्राड (Tetrad) बनाते हैं।
5. बाद में ये अलग होकर स्वतंत्र लघुबीजाणु बन जाते हैं।

3. लघुबीजाणु की संरचना (संक्षेप)

- बाह्य भित्ति : एक्साइन (Exine) – मजबूत, स्पोरोपोलिनिन से बनी
- आंतरिक भित्ति : इन्टाइन (Intine) – पतली, सेल्यूलोज से बनी
- अंकुरण रंध्र : Germ pore

भाग-2 : नर युग्मोद्भिद (MALE GAMETOPHYTE) का विकास

1. नर युग्मोद्भिद की परिभाषा

लघुबीजाणु से विकसित वह संरचना जो नर युग्मकों का निर्माण करती है, नर युग्मोद्भिद कहलाती है।

☞ पुष्पीय पौधों में नर युग्मोद्भिद अत्यंत संक्षिप्त (Reduced) होता है।

2. परागकण का विकास (MICROGAMETOGENESIS)

चरण 1 : प्रथम मिथोटिक विभाजन

- लघुबीजाणु में मिथोटिक विभाजन होता है।
- इससे दो असमान कोशिकाएँ बनती हैं—
 1. वनस्पतिक कोशिका (Vegetative cell)
 2. जनक कोशिका (Generative cell)

☞ यह अवस्था अधिकांश पौधों में परागकण के परागकोष से निकलते समय पाई जाती है।

चरण 2 : द्विकोषीय परागकण (TWO-CELLED POLLEN GRAIN)

- वनस्पतिक कोशिका बड़ी होती है।
 - जनक कोशिका छोटी एवं तैरती हुई होती है।
 - यह अवस्था परागण के समय सामान्यतः पाई जाती है।
-

चरण 3 : जनक कोशिका का विभाजन

- जनक कोशिका मिथोटिक विभाजन से
 - दो नर युग्मक (Male gametes) बनाती है।
-

3. परिपक्व नर युग्मोद्भिद की संरचना

परिपक्व नर युग्मोद्भिद में तीन कोशिकाएँ होती हैं—

1. एक वनस्पतिक कोशिका
2. दो नर युग्मक

यही अवस्था निषेचन के समय पाई जाती है।

परागण के बाद की घटनाएँ (संक्षेप संकेत)

- परागकण वर्तिकाग्र पर अंकुरित होता है।
- परागनली बनती है।
- नर युग्मक अंडप तक पहुँचते हैं।
- **द्विगुण निषेचन (Double fertilization)** होता है।

जैविक महत्व (BIOLOGICAL SIGNIFICANCE)

- नर युग्मक निर्माण संभव होता है
- लैंगिक प्रजनन की सफलता
- आनुवंशिक विविधता में वृद्धि
- पौधों की वंश वृद्धि सुनिश्चित

लघुबीजाणु एवं नर युग्मोद्भिद में अंतर

आधार	लघुबीजाणु	नर युग्मोद्भिद
प्रकृति	एकल कोशिका	बहुकोशिकीय
गुणसूत्र संख्या	n	n
कार्य	युग्मोद्भिद बनाना	नर युग्मक बनाना

पुष्पीय पौधों (Angiosperms) में मादा प्रजनन तंत्र का विकास गुरुबीजाणुजनन एवं गुरुबीजाणुधानी से संबंधित है। इन्हीं प्रक्रियाओं द्वारा स्त्री युग्मोद्भिद (Female gametophyte / Embryo sac) का निर्माण होता है।

भाग-1 : गुरुबीजाणुधानी (MEGASPORANGIUM)

1 परिभाषा

बीजांड (Ovule) के भीतर स्थित वह संरचना जिसमें गुरुबीजाणु बनते हैं, गुरुबीजाणुधानी कहलाती है।

☞ पुष्पीय पौधों में बीजांड ही गुरुबीजाणुधानी का कार्य करता है।

2 स्थिति

- गुरुबीजाणुधानी अंडाशय (Ovary) के भीतर पाई जाती है।
 - यह अंडासन (Placenta) से जुड़ी रहती है।
-

3 गुरुबीजाणुधानी (बीजांड) की संरचना

(क) बाह्य संरचना

1. बीजांड डंठल (Funiculus) – बीजांड को अंडासन से जोड़ता है
 2. हाइलम (Hilum) – जुड़ाव का स्थान
 3. माइक्रोपाइल (Micropyle) – सूक्ष्म छिद्र
 4. चालाजा (Chalaza) – माइक्रोपाइल के विपरीत भाग
-

(ख) आंतरिक संरचना

1. न्यूसेलस (Nucellus)
 - गुरुबीजाणुधानी का मुख्य ऊतक
 - पोषण प्रदान करता है
2. आवरण (Integuments)
 - सामान्यतः दो (द्वि-आवरणीय)
 - बीजांड की सुरक्षा

3. गुरुबीजाणु जनक कोशिका (Megaspore Mother Cell – MMC)

- न्यूसेलस के भीतर स्थित
- द्विगुणित ($2n$)

भाग-2 : गुरुबीजाणुजनन (MEGASPOROGENESIS)

1 परिभाषा

गुरुबीजाणु जनक कोशिका में अर्धसूत्री विभाजन द्वारा गुरुबीजाणुओं के निर्माण की प्रक्रिया को गुरुबीजाणुजनन कहते हैं।

2 प्रक्रिया का विस्तृत वर्णन

1. न्यूसेलस की एक कोशिका MMC बनती है।
2. MMC द्विगुणित ($2n$) होती है।
3. MMC में अर्धसूत्री विभाजन होता है।
4. इससे चार हैप्लॉइड गुरुबीजाणु बनते हैं (गुरुबीजाणु टेट्रैड)।
5. सामान्यतः—
 - तीन गुरुबीजाणु नष्ट हो जाते हैं
 - केवल एक क्रियाशील (Functional) गुरुबीजाणु शेष रहता है।

भाग-3 : स्त्री युग्मोद्भिद (EMBRYO SAC) का विकास (संदर्भ हेतु)

- क्रियाशील गुरुबीजाणु में तीन मिथोटिक विभाजन होते हैं।
- इससे 8 नाभिकीय, 7 कोशिकीय भ्रूणकोष बनता है।

भ्रूणकोष की संरचना—

- अंड कोशिका (Egg cell) – 1
 - सहायक कोशिकाएँ (Synergids) – 2
 - प्रतिपाद कोशिकाएँ (Antipodals) – 3
 - केंद्रीय कोशिका (Central cell) – 1 (दो ध्रुवीय नाभिक)
-

गुरुबीजाणुधानी एवं गुरुबीजाणुजनन में अंतर

आधार	गुरुबीजाणुधानी	गुरुबीजाणुजनन
प्रकृति	संरचना	प्रक्रिया
स्थान	बीजांड	न्यूसेलस में
कार्य	MMC को धारण करना	गुरुबीजाणु बनाना

जैविक महत्व (BIOLOGICAL SIGNIFICANCE)

- मादा युग्मक (Egg) का निर्माण
- निषेचन एवं बीज निर्माण संभव
- पौधों की वंश वृद्धि
- आनुवंशिक विविधता में वृद्धि

05 संरचना (बीजाण्ड का लम्बवर्ती काट)-

संरचना : बीजाण्ड का लम्बवर्ती काट (L.S. OF OVULE) —

बीजाण्ड (Ovule) पुष्पीय पौधों में **मादा प्रजनन अंग** का अत्यंत महत्वपूर्ण भाग है। बीजाण्ड के **लम्बवर्ती काट (Longitudinal Section – L.S.)** का अध्ययन **गुरुबीजाणुधानी, गुरुबीजाणुजनन तथा भ्रूणकोष (Embryo sac)** की संरचना को समझने के लिए आवश्यक है।

1. बीजाण्ड का सामान्य परिचय

- बीजाण्ड **अंडाशय (Ovary)** के भीतर स्थित होता है।
- यह **अंडासन (Placenta)** से जुड़ा रहता है।
- निषेचन के बाद बीजाण्ड → **बीज** में परिवर्तित हो जाता है।

2. बीजाण्ड के लम्बवर्ती काट में दिखाई देने वाले भाग

नीचे L.S. of Ovule में पाए जाने वाले सभी भागों का क्रमबद्ध एवं विस्तृत विवरण दिया गया है—

(A) बीजाण्ड डंठल — फ्यूनिकुलस (FUNICULUS)

- बीजाण्ड को अंडासन से जोड़ता है
- इसके माध्यम से पोषण एवं जल का परिवहन होता है

(B) हाइलम (HILUM)

- वह स्थान जहाँ फ्यूनिकुलस बीजाण्ड से जुड़ता है
- बीज बनने पर भी यह चिह्न बना रहता है

(C) आवरण (INTEGUMENTS)

- बीजाण्ड के चारों ओर स्थित सुरक्षात्मक परतें
- सामान्यतः दो होती हैं (Outer एवं Inner Integument)
- निषेचन के बाद—
 - बाह्य आवरण → टेस्टा (Testa)
 - आंतरिक आवरण → टेगमेन (Tegmen)

(D) माइक्रोपाइल (MICROPYLE)

- आवरणों द्वारा छोड़ा गया छोटा छिद्र
- कार्य:
 - परागनली का प्रवेश

- बाद में जल व वायु का प्रवेश

(E) न्यूसेलस (NUCELLUS)

- गुरुबीजाणुधानी का मुख्य ऊतक
- भ्रूणकोष को चारों ओर से घेरता है
- कार्य:
 - भ्रूणकोष को पोषण प्रदान करना

(F) गुरुबीजाणु जनक कोशिका (MMC)

- न्यूसेलस के भीतर स्थित
- द्विगुणित ($2n$)
- इसी में अर्धसूत्री विभाजन होकर गुरुबीजाणु बनते हैं

(G) भ्रूणकोष / स्त्री युग्मोद्भिद (EMBRYO SAC)

- बीजाण्ड का सबसे महत्वपूर्ण भाग
- सामान्यतः 8 नाभिकीय, 7 कोशिकीय संरचना

भ्रूणकोष की कोशिकाएँ—

1. अंड कोशिका (Egg cell) – 1
2. सहायक कोशिकाएँ (Synergids) – 2
3. प्रतिपाद कोशिकाएँ (Antipodals) – 3
4. केंद्रीय कोशिका (Central cell) – 1 (दो ध्रुवीय नाभिक)

(H) चालाजा (CHALAZA)

- माइक्रोपाइल के विपरीत स्थित भाग
- न्यूसेलस व आवरणों का संगम स्थल
- पोषण के वितरण में सहायक

3. बीजाण्ड के प्रकार (संक्षेप संकेत)

- अनात्रोपस (Anatropous) – सर्वाधिक सामान्य
- ऑर्थोट्रोपस, कैमपिलोट्रोपस, सर्किनोट्रोपस आदि

4. जैविक महत्व (BIOLOGICAL SIGNIFICANCE)

- मादा युग्मक का निर्माण
- निषेचन का स्थान
- बीज एवं भ्रूण का विकास
- पौधों की वंश वृद्धि सुनिश्चित

06 गुरुबीजाणु एवं मादा युग्मोद्भिद का विकास -

गुरुबीजाणु एवं मादा युग्मोद्भिद का विकास — सम्पूर्ण विश्लेषण

पुष्पीय पौधों (Angiosperms) में **मादा प्रजनन** की प्रक्रिया गुरुबीजाणु (Megaspore) के निर्माण से प्रारम्भ होकर **मादा युग्मोद्भिद (Female Gametophyte / Embryo sac)** के पूर्ण विकास तक सम्पन्न होती है। यह संपूर्ण प्रक्रिया **बीजाण्ड (Ovule)** के भीतर होती है।

भाग-1 : गुरुबीजाणु (MEGASPORE) का विकास

1 गुरुबीजाणु का परिचय

- गुरुबीजाणु एक **हैप्लॉइड (n)** कोशिका होती है।
- यह बीजाण्ड के **न्यूसेलस** में बनती है।

- आगे चलकर यही गुरुबीजाणु मादा युग्मोद्भिद का निर्माण करती है।

2 गुरुबीजाणुजनन (MEGASPOROGENESIS)

परिभाषा

गुरुबीजाणु जनक कोशिका (MMC) में अर्धसूत्री विभाजन द्वारा गुरुबीजाणुओं के निर्माण की प्रक्रिया को गुरुबीजाणुजनन कहते हैं।

प्रक्रिया

1. न्यूसेलस की एक कोशिका MMC बनती है ($2n$)।
2. MMC में अर्धसूत्री विभाजन (Meiosis) होता है।
3. इसके फलस्वरूप चार हैप्लॉइड गुरुबीजाणु बनते हैं (गुरुबीजाणु टेट्रेड)।
4. सामान्यतः तीन गुरुबीजाणु नष्ट हो जाते हैं।
5. केवल एक क्रियाशील (Functional) गुरुबीजाणु शेष रहता है।

भाग-2 : मादा युग्मोद्भिद (EMBRYO SAC) का विकास

1 मादा युग्मोद्भिद की परिभाषा

गुरुबीजाणु से विकसित वह संरचना जो मादा युग्मक (अंड कोशिका) का निर्माण करती है, मादा युग्मोद्भिद कहलाती है।

☞ पुष्पीय पौधों में मादा युग्मोद्भिद अत्यंत संक्षिप्त एवं संरक्षित होता है।

2 मादा युग्मोद्भिद का विकास (MEGAGAMETOGENESIS)

चरण 1 : प्रथम मिथोटिक विभाजन

- क्रियाशील गुरुबीजाणु में मिथोटिक विभाजन होता है।

- इससे दो **नाभिक** बनते हैं, जो विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं।

चरण 2 : द्वितीय मिथोटिक विभाजन

- दोनों नाभिक पुनः विभाजित होते हैं।
- इससे चार **नाभिक** बनते हैं।

चरण 3 : तृतीय मिथोटिक विभाजन

- चारों नाभिक पुनः विभाजित होते हैं।
- परिणामस्वरूप आठ **नाभिक** बनते हैं।

3 आठ नाभिकीय भ्रूणकोष का संगठन

आठ नाभिक व्यवस्थित होकर 7 कोशिकीय भ्रूणकोष बनाते हैं—

(A) माइक्रोपाइली छोर

- **अंड यंत्र (Egg apparatus)**
 - 1 अंड कोशिका
 - 2 सहायक कोशिकाएँ (Synergids)

(B) चालाजा छोर

- 3 प्रतिपाद कोशिकाएँ (Antipodals)

(C) मध्य भाग

- **केंद्रीय कोशिका**
 - इसमें दो ध्रुवीय नाभिक (Polar nuclei) होते हैं

- बाद में मिलकर द्विगुणित द्वितीयक नाभिक बनाते हैं

मादा युग्मोद्भिद का प्रकार

- अधिकांश आवृतबीजी पौधों में
मोनोस्पोरिक, पॉलीगोनम प्रकार (Polygonum type)
- यह सबसे सामान्य प्रकार है।

जैविक महत्व (BIOLOGICAL SIGNIFICANCE)

- मादा युग्मक (Egg) का निर्माण
- द्विगुण निषेचन संभव
- भ्रूण एवं बीज का निर्माण
- पौधों की वंश वृद्धि

07 वैदिक काल में बीज भ्रूण विज्ञान -

वैदिक काल में बीज एवं भ्रूण विज्ञान — सम्पूर्ण विश्लेषण ❀

वैदिक काल (लगभग 1500–600 ई.पू.) भारतीय ज्ञान-परंपरा का अत्यंत समृद्ध युग था। इस काल में यद्यपि आधुनिक अर्थों में **वनस्पति भ्रूण विज्ञान (EMBRYOLOGY)** का वैज्ञानिक वर्गीकरण नहीं था, फिर भी **बीज, अंकुरण, गर्भधारण, भ्रूण विकास और जीवन-उत्पत्ति** से संबंधित गहन दार्शनिक, प्राकृतिक और जैविक अवधारणाएँ उपलब्ध थीं। वैदिक ऋषियों ने **सूक्ष्म निरीक्षण, अनुभव और चिंतन** के आधार पर बीज एवं भ्रूण के विकास की मूलभूत समझ प्रस्तुत की।

1. वैदिक काल में बीज की अवधारणा

(क) बीज का दार्शनिक अर्थ

वैदिक साहित्य में **बीज** को केवल पौधों तक सीमित नहीं माना गया, बल्कि इसे—

- सृष्टि का मूल कारण
- जीवन का प्रारंभिक तत्व
- कारण-कार्य सिद्धांत का आधार

माना गया।

ऋग्वेद में कहा गया है—

“**बीजं गर्भं समैरयन्**”

(बीज से गर्भ की उत्पत्ति होती है)

☞ इससे स्पष्ट है कि बीज को **जीवन की आधारशिला** माना गया।

(ख) बीज एवं अंकुरण

- बीज में जीवन-शक्ति (प्राण) का अस्तित्व स्वीकार किया गया
- जल, मिट्टी, सूर्य और वायु को अंकुरण हेतु आवश्यक बताया गया
- बीज से पौधे के विकास को **प्राकृतिक नियम** माना गया

☞ यह आधुनिक **SEED VIABILITY** और **GERMINATION** की अवधारणा से मेल खाता है।

2. वैदिक काल में भ्रूण (GARBHA) की अवधारणा

(क) गर्भ का अर्थ

वैदिक साहित्य में **गर्भ** शब्द का प्रयोग—

- भ्रूण
- बीज
- छिपी हुई सृजन-शक्ति

के लिए किया गया है।

अथर्ववेद में गर्भ के विकास का विस्तृत वर्णन मिलता है।

(ख) भ्रूण का विकास (EMBRYONIC DEVELOPMENT)

वैदिक ऋषियों ने भ्रूण के विकास को **क्रमिक प्रक्रिया** माना—

1. गर्भाधान
2. गर्भ का स्थिरीकरण
3. अंग-निर्माण
4. चेतना का विकास

📖 यह आधुनिक **STAGES OF EMBRYONIC DEVELOPMENT** की प्रारंभिक अवधारणा है।

3. बीज-भ्रूण संबंध (SEED-EMBRYO RELATIONSHIP)

वैदिक काल में यह स्पष्ट किया गया कि—

- बीज बिना भ्रूण के निरर्थक है
- भ्रूण बीज के भीतर सुरक्षित रहता है
- अनुकूल परिस्थितियों में ही विकास संभव है

📖 यह आज के **DORMANCY** और **ENVIRONMENTAL FACTORS** के सिद्धांत से मेल खाता है।

4. उपनिषदों में बीज एवं भ्रूण विज्ञान

(क) छांदोग्य उपनिषद

- बीज को **सूक्ष्म जीवन तत्व** बताया गया

- वृक्ष, फल और बीज के उदाहरण से जीवन-चक्र समझाया गया

(ख) बृहदारण्यक उपनिषद्

- गर्भस्थ भ्रूण के पोषण और विकास का वर्णन
- माता के शरीर को भ्रूण का पोषक माध्यम माना गया

5. वैदिक कालीन भ्रूण विज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ

1. जीवन की निरंतरता का सिद्धांत
2. बीज में संभाव्यता (Potentiality) की अवधारणा
3. प्राकृतिक शक्तियों की भूमिका
4. शरीर एवं चेतना का संयुक्त विकास
5. कारण-कार्य संबंध की स्पष्ट समझ

6. आधुनिक भ्रूण विज्ञान से तुलना

वैदिक अवधारणा	आधुनिक भ्रूण विज्ञान
बीज = जीवन का स्रोत	Seed contains embryo
गर्भ = विकास स्थल	Ovule / Uterus
क्रमिक विकास	Stages of development
प्राकृतिक शक्तियाँ	Environmental factors

7. जैविक एवं सांस्कृतिक महत्व

- कृषि विज्ञान का आधार
- वंश वृद्धि की समझ

- जीवन के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण
 - भारतीय जैव-दर्शन की नींव
-

यूनिट -04

परागन

1. परागन का परिचय और परिभाषा -

परागन का परिचय

परागन पुष्पीय पौधों में होने वाली एक अत्यंत आवश्यक जैविक प्रक्रिया है, जो लैंगिक प्रजनन की आधारशिला मानी जाती है। इस प्रक्रिया के बिना पौधों में **निषेचन, बीज निर्माण तथा फल निर्माण** संभव नहीं हो पाता। परागन के माध्यम से पौधों में वंशानुगत गुणों का स्थानांतरण होता है, जिससे जैव विविधता बनी रहती है।

पुष्पों में नर जननांग **पुंकेसर (Stamen)** तथा मादा जननांग **अंडप (Pistil)** पाए जाते हैं। पुंकेसर के परागकोष से निकलने वाले परागकणों का वर्तिकाग्र तक पहुँचना ही परागन कहलाता है। यह प्रक्रिया प्रकृति में **वायु, जल, कीट, पक्षी, जानवर और मनुष्य** जैसे विभिन्न कारकों की सहायता से संपन्न होती है।

2. परागन की परिभाषा

परागन वह जैविक प्रक्रिया है जिसमें पुष्प के **परागकोष (Anther)** से उत्पन्न **परागकण (Pollen grains)** उसी पुष्प या किसी अन्य पुष्प के **वर्तिकाग्र (Stigma)** तक स्थानांतरित होते हैं।

3. परागन का जैविक विश्लेषण

(क) परागकण की भूमिका

परागकण में नर युग्मक (Male gametes) पाए जाते हैं। परागन के पश्चात परागकण अंकुरित होकर **परागनली (Pollen tube)** बनाता है, जो अंडाशय तक पहुँचकर निषेचन की प्रक्रिया को संभव बनाती है।

(ख) वर्तिकाग्र की भूमिका

वर्तिकाग्र चिपचिपा होता है, जिससे परागकण उस पर आसानी से चिपक जाते हैं। यह परागकणों को पोषण प्रदान करता है।

4. परागन का महत्व (विश्लेषणात्मक दृष्टि से)

1. **प्रजनन की निरंतरता** – परागन के बिना पौधों की पीढ़ी आगे नहीं बढ़ सकती।
 2. **बीज एवं फल निर्माण** – कृषि उत्पादन पूरी तरह परागन पर निर्भर करता है।
 3. **आनुवंशिक विविधता** – विशेष रूप से परपरागन से नई प्रजातियों का विकास होता है।
 4. **पारिस्थितिक संतुलन** – परागणकर्ता जीवों (मधुमक्खी, तितली आदि) का संरक्षण होता है।
 5. **आर्थिक महत्व** – खाद्यान्न, फल, सब्जियाँ और तेलहन फसलें परागन पर निर्भर हैं।
-
-

02- परागन के प्रकार –

परागण के स्रोत के आधार पर परागन के प्रकार

(क) स्वपरागन (SELF-POLLINATION)

जब परागकण उसी पुष्प या उसी पौधे के किसी अन्य पुष्प के वर्तिकाग्र तक पहुँचते हैं, तो इसे स्वपरागन कहते हैं।

स्वपरागन के उपप्रकार

1. **स्वपुष्पी परागन (Autogamy)**
 - परागन उसी पुष्प के भीतर होता है।
 - पुष्प प्रायः उभयलिंगी होते हैं।
 - उदाहरण: मटर, गेहूँ, धान
2. **भिन्नपुष्पी परागन (Geitonogamy)**
 - परागन उसी पौधे के एक पुष्प से दूसरे पुष्प में होता है।
 - आनुवंशिक दृष्टि से यह स्वपरागन ही है।
 - उदाहरण: मक्का, अरंडी

स्वपरागन का विश्लेषणात्मक महत्व

लाभ:

- कम परागकणों की आवश्यकता
- वंशानुगत गुण स्थिर रहते हैं

- परागणकर्ताओं पर निर्भरता नहीं

हानियाँ:

- आनुवंशिक विविधता का अभाव
- रोग प्रतिरोधक क्षमता कम
- नई प्रजातियों का विकास सीमित

(ख) परपरागन (CROSS-POLLINATION / XENO GAMY)

जब परागकण एक पौधे के पुष्प से उसी प्रजाति के दूसरे पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र तक पहुँचते हैं, तो इसे परपरागन कहते हैं।

परपरागन का विश्लेषणात्मक महत्व

लाभ:

- आनुवंशिक विविधता में वृद्धि
- नई किस्मों और प्रजातियों का विकास
- अधिक स्वस्थ और शक्तिशाली संतान (Hybrid vigor)

हानियाँ:

- अधिक परागकणों की आवश्यकता
- परागणकर्ताओं पर निर्भरता
- अनिश्चितता अधिक

2. परागन के कारकों (AGENTS) के आधार पर प्रकार

(क) वायुपरागन (ANEMOPHILY)

- परागन वायु द्वारा होता है।
- परागकण हल्के, सूखे और अधिक मात्रा में होते हैं।
- उदाहरण: गेहूँ, मक्का, घास

(ख) जलपरागन (HYDROPHILY)

- जल द्वारा परागन होता है।
- जलीय पौधों में पाया जाता है।
- उदाहरण: वेलिसनेरिया

(ग) कीटपरागन (ENTOMOPHILY)

- कीटों द्वारा परागन
- पुष्प रंगीन, सुगंधित और मधुरसयुक्त
- उदाहरण: सरसों, सूरजमुखी

(घ) पक्षीपरागन (ORNITHOPHILY)

- पक्षियों द्वारा परागन
- पुष्प बड़े, चमकीले, लाल रंग के
- उदाहरण: सेमल

(ङ) जन्तुपरागन (ZOOHILY)

- अन्य जानवरों द्वारा परागन
- उदाहरण: चमगादड़ द्वारा कुछ वृक्षों का परागन

3. स्वपरागन और परपरागन को प्रभावित करने वाले तंत्र

स्वपरागन को बढ़ावा देने वाले तंत्र

- पुष्प का बंद रहना (क्लीस्टोगैमी)
- नर और मादा अंगों की समान परिपक्वता

परपरागन को बढ़ावा देने वाले तंत्र

- एकलिंगी पुष्प
 - समयभेद (Dichogamy)
 - स्व-असंगतता (Self-incompatibility)
-
-

03- स्व-परागन और पर-परागन में यांत्रिक युक्तियाँ -

1. स्व-परागन (SELF-POLLINATION) में यांत्रिक युक्तियाँ

स्व-परागन का उद्देश्य परागकणों को उसी पुष्प या उसी पौधे के पुष्प तक पहुँचाना है। इसके लिए निम्न यांत्रिक युक्तियाँ पाई जाती हैं—

(क) क्लीस्टोगैमी (CLEISTOGAMY)

- पुष्प कभी नहीं खुलते।
- परागकोष वर्तिकाग्र के अत्यंत निकट होते हैं।
- परागन पुष्प के भीतर ही हो जाता है।

विश्लेषण:

यह सबसे सुरक्षित युक्ति है, क्योंकि इसमें बाह्य कारकों की कोई आवश्यकता नहीं होती।

उदाहरण: मूंगफली, मटर, वायोला

(ख) समकालिक परिपक्वता (HOMOGAMY)

- पुंकेसर और अंडप एक ही समय पर परिपक्व होते हैं।

विश्लेषण:

इससे परागकण उसी पुष्प के वर्तिकाग्र पर गिरने की संभावना बढ़ जाती है।

(ग) परागकोष और वर्तिकाग्र की निकटता

- दोनों जननांग पास-पास स्थित होते हैं।

विश्लेषण:

थोड़ी-सी गति (हवा, झटका) से भी परागन संभव हो जाता है।

(घ) पुष्प का झुकना या बंद होना

- कुछ पुष्प पराग निकलते समय बंद या झुके रहते हैं।

विश्लेषण:

यह युक्ति परागकणों को बाहर जाने से रोकती है।

- पराग की बचत
- वंशानुगत गुणों की स्थिरता
- परागणकर्ता की आवश्यकता नहीं

2. पर-परागन (CROSS-POLLINATION) में यांत्रिक युक्तियाँ

पर-परागन का उद्देश्य एक पौधे से दूसरे पौधे तक पराग पहुँचाना है। इसके लिए पौधों में ऐसी युक्तियाँ विकसित हुई हैं जो स्व-परागन को रोकती हैं।

(क) एकलिंगी पुष्प (UNISEXUALITY)

- नर और मादा पुष्प अलग-अलग होते हैं।

विश्लेषण:

स्व-परागन की संभावना समाप्त हो जाती है।

उदाहरण: पपीता, खजूर

(ख) द्विवासिता (DIOECY)

- नर और मादा पुष्प अलग-अलग पौधों पर होते हैं।

विश्लेषण:

पर-परागन अनिवार्य हो जाता है।

(ग) विषमकालिकता (DICHOGAMY)

नर और मादा अंग अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं।

1. प्रोटैण्डी – पहले पुंकेसर परिपक्व
2. प्रोटोजाइनी – पहले वर्तिकाग्र परिपक्व

विश्लेषण:

स्व-परागन समय के अंतर के कारण रुक जाता है।

(घ) हर्कोगैमी (HERKOGAMY)

- परागकोष और वर्तिकाग्र के बीच भौतिक दूरी होती है।

विश्लेषण:

संरचनात्मक अवरोध के कारण स्व-परागन नहीं हो पाता।

(ङ) स्व-असंगतता (SELF-INCOMPATIBILITY)

- परागकण उसी पुष्प के वर्तिकाग्र पर अंकुरित नहीं होते।

विश्लेषण:

यह एक जैव-यांत्रिक नियंत्रण तंत्र है जो पर-परागन को सुनिश्चित करता है।

पर-परागन यांत्रिक युक्तियों का समग्र महत्व

- आनुवंशिक विविधता
- संकर शक्ति (Hybrid vigor)
- बेहतर अनुकूलन और उत्क्रांति

3. तुलनात्मक विश्लेषण (संक्षेप में)

आधार	स्व-परागन	पर-परागन
मुख्य उद्देश्य	स्थिरता	विविधता
युक्तियों का प्रकार	पुष्प बंद/निकट	दूरी/अवरोध
परागणकर्ता	आवश्यक नहीं	आवश्यक
उत्क्रांति	सीमित	अधिक

परागन की एजेंसीयाँ (AGENTS OF POLLINATION)

परागन की एजेंसीयाँ वे प्राकृतिक कारक हैं, जिनकी सहायता से परागकण परागकोष से वर्तिकाग्र तक पहुँचते हैं। इन एजेंसीयों के बिना अधिकांश पौधों में परागन संभव नहीं होता। परागन की एजेंसीयाँ मुख्यतः **अजैविक (निर्जीव)** और **जैविक (सजीव)** दो वर्गों में बाँटी जाती हैं।

1. अजैविक परागन एजेंसीयाँ (ABIOTIC AGENTS)

(क) वायु (हवा) — वायुपरागन (ANEMOPHILY)

- परागन हवा द्वारा होता है।
- परागकण हल्के, सूखे और बहुत अधिक संख्या में होते हैं।
- पुष्प छोटे, रंगहीन, सुगंधहीन होते हैं।

उदाहरण: गेहूँ, मक्का, घास

विश्लेषण:

वायुपरागन में पराग की बर्बादी अधिक होती है, परंतु परागणकर्ता जीवों पर निर्भरता नहीं रहती।

(ख) जल — जलपरागन (HYDROPHILY)

- जल द्वारा परागकण एक पुष्प से दूसरे पुष्प तक पहुँचते हैं।
- मुख्यतः जलीय पौधों में पाया जाता है।

उदाहरण: वेलिसनेरिया, हाइड्रिला

विश्लेषण:

यह परागन का दुर्लभ प्रकार है और केवल सीमित पौधों में पाया जाता है।

2. जैविक परागन एजेंसीयाँ (BIOTIC AGENTS)

(क) कीट — कीटपरागन (ENTOMOPHILY)

- मधुमक्खी, तितली, भौंरा, मक्खी आदि परागन करते हैं।
- पुष्प रंगीन, सुगंधित और मधुरसयुक्त होते हैं।

उदाहरण: सरसों, सूरजमुखी, गुलाब

विश्लेषण:

यह सबसे सामान्य और प्रभावी परागन एजेंसी है।

(ख) पक्षी — पक्षीपरागन (ORNITHOPHILY)

- पक्षी जैसे सनबर्ड, हमिंगबर्ड द्वारा परागन।
- पुष्प बड़े, चमकीले (विशेषतः लाल), मधुरस से भरपूर।

उदाहरण: सेमल, बॉटलब्रश

(ग) चमगादड़ — चमगादड़ परागन (CHIROPTEROPHILY)

- रात में खिलने वाले पुष्प
- पुष्प बड़े, गंधयुक्त, अधिक मधुरसयुक्त

उदाहरण: केला, अगावे

(घ) अन्य जानवर — जन्तुपरागन (ZOOPHILY)

- बंदर, गिलहरी, कीड़े आदि द्वारा
- अपेक्षाकृत दुर्लभ

3. मानव द्वारा परागन (ARTIFICIAL POLLINATION)

- मनुष्य द्वारा नियंत्रित परागन
- कृषि एवं संकरण प्रयोगों में उपयोग

उदाहरण: संकर फसलों का विकास

4. परागन एजेंसियों का समग्र महत्व

- पौधों में प्रजनन सुनिश्चित करना
 - जैव विविधता बनाए रखना
 - कृषि उत्पादन बढ़ाना
 - पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना
-
-

05- स्व-परागन और पर-परागन के लाभ एवं हानी –

स्व-परागन एवं पर-परागन : लाभ एवं हानियाँ (सम्पूर्ण विश्लेषण)

पुष्पीय पौधों में परागन दो मुख्य प्रकार का होता है— **स्व-परागन** और **पर-परागन**। दोनों प्रक्रियाएँ पौधों के अस्तित्व, अनुकूलन और उत्क्रांति में अलग-अलग भूमिका निभाती हैं। नीचे दोनों के **लाभ एवं हानियाँ** का समग्र, व्यवस्थित और विश्लेषणात्मक वर्णन प्रस्तुत है।

1. स्व-परागन (SELF-POLLINATION)

स्व-परागन के लाभ

1. **निश्चित बीज निर्माण**
प्रतिकूल परिस्थितियों (कीटों की अनुपस्थिति, मौसम की खराबी) में भी बीज बन जाते हैं।
2. **परागकणों की बचत**
कम संख्या में परागकण पर्याप्त होते हैं, इसलिए ऊर्जा की बचत होती है।
3. **वंशानुगत गुणों की स्थिरता**
माता-पिता के गुण पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित रहते हैं, जिससे शुद्ध जाति बनी रहती है।
4. **परागण एजेंसियों पर निर्भरता नहीं**
हवा, जल या कीटों की आवश्यकता नहीं होती।
5. **कम ऊर्जा व्यय**
पुष्प साधारण, छोटे और कम आकर्षक होते हैं।

स्व-परागन की हानियाँ

1. **आनुवंशिक विविधता का अभाव**
नए गुणों का समावेश नहीं हो पाता।

2. **कम अनुकूलन क्षमता**
पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति पौधे कमजोर हो जाते हैं।
 3. **रोगों के प्रति संवेदनशीलता**
समान गुणों के कारण पूरी फसल एक साथ रोगग्रस्त हो सकती है।
 4. **उत्क्रांति की गति धीमी**
नई जातियों या किस्मों का विकास सीमित रहता है।
 5. **संकर शक्ति का अभाव**
संतान में विशेष बल या उत्पादन क्षमता नहीं बढ़ती।
-

2. पर-परागन (CROSS-POLLINATION)

पर-परागन के लाभ

1. **आनुवंशिक विविधता में वृद्धि**
विभिन्न पौधों के गुणों का मिश्रण होता है।
 2. **संकर शक्ति (Hybrid Vigor)**
संतान अधिक स्वस्थ, शक्तिशाली और उत्पादक होती है।
 3. **रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक**
विविध गुणों के कारण रोगों से लड़ने की शक्ति बढ़ती है।
 4. **बेहतर अनुकूलन क्षमता**
पौधे बदलते पर्यावरण में आसानी से ढल जाते हैं।
 5. **उत्क्रांति को प्रोत्साहन**
नई किस्मों और प्रजातियों का विकास संभव होता है।
-

पर-परागन की हानियाँ

1. **अधिक परागकणों की आवश्यकता**
पराग की बर्बादी अधिक होती है।
2. **परागण एजेंसियों पर निर्भरता**
कीट, पक्षी, वायु या जल की अनुपस्थिति में परागन असफल हो सकता है।
3. **अनिश्चित बीज निर्माण**
हर बार सफल परागन की गारंटी नहीं होती।
4. **अधिक ऊर्जा व्यय**
पुष्प बड़े, रंगीन, सुगंधित और मधुरसयुक्त होते हैं।

5. शुद्ध जाति बनाए रखना कठिन
वांछित गुणों की स्थिरता बनाए रखना मुश्किल होता है।

3. तुलनात्मक सार (SUMMARY TABLE)

आधार	स्व-परागन	पर-परागन
आनुवंशिक विविधता	कम	अधिक
बीज निर्माण	निश्चित	अनिश्चित
पराग की आवश्यकता	कम	अधिक
अनुकूलन क्षमता	कम	अधिक
उत्क्रांति	धीमी	तीव्र
ऊर्जा व्यय	कम	अधिक

06 – भारतीय पम्परा में फूलों के पराग का महत्त्व और प्रतीकात्मकता –

भारतीय परम्परा में फूलों के पराग का महत्त्व एवं प्रतीकात्मकता

भारतीय संस्कृति में फूल केवल सौंदर्य के प्रतीक नहीं हैं, बल्कि उनका पराग (पोलन) आध्यात्मिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और आयुर्वेदिक दृष्टि से अत्यंत पवित्र और अर्थपूर्ण माना गया है। पराग को जीवन, सृजन, शुद्धता और चेतना का सूक्ष्म प्रतीक समझा जाता है।

1. धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्त्व

(क) सृष्टि और जीवन का प्रतीक

पराग को सृजन शक्ति का प्रतीक माना गया है, क्योंकि उसी से बीज और नया जीवन उत्पन्न होता है।

- यह ब्रह्मा की सृजनात्मक शक्ति का सूक्ष्म रूप माना जाता है।

(ख) देवताओं की पूजा में पराग का स्थान

- पूजा में पुष्प अर्पण का अर्थ है पराग सहित जीवन-ऊर्जा को ईश्वर को समर्पित करना।
- माना जाता है कि पराग में पुष्प की प्राणशक्ति निहित होती है।

(ग) कमल और उसका पराग

- कमल का पराग **पवित्रता, वैराग्य और आत्मज्ञान** का प्रतीक है।
 - देवी लक्ष्मी और भगवान विष्णु से कमल का विशेष संबंध है।
-

2. प्रतीकात्मक अर्थ (SYMBOLISM)

(क) ज्ञान और चेतना का प्रतीक

- जैसे पराग फूल का सार है, वैसे ही **ज्ञान जीवन का सार** है।
- भारतीय दर्शन में पराग को **सूक्ष्म सत्य** का रूप माना गया है।

(ख) समर्पण और भक्ति

- फूल का पराग बिना भेदभाव के फैलता है—यह **निष्काम कर्म और सेवा** का प्रतीक है।

(ग) एकता और सामंजस्य

- मधुमक्खी अनेक फूलों से पराग एकत्र करती है—यह **विविधता में एकता** का प्रतीक है।
-

3. आयुर्वेदिक एवं पारंपरिक विश्वास

(क) औषधीय महत्त्व

- आयुर्वेद में पुष्प-पराग को **पोषक, बलवर्धक और रोग-प्रतिरोधक** माना गया है।
- मधु (शहद) को पराग का ही परिष्कृत रूप माना जाता है।

(ख) पंचतत्त्व से संबंध

- पराग में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—पाँचों तत्वों का संतुलन माना जाता है।
-

4. सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ

(क) उत्सव और संस्कार

- विवाह, जन्म, यज्ञ, हवन आदि में फूल और उनका पराग **शुभता और मंगल** का प्रतीक है।

(ख) रंग और पराग

- होली जैसे पर्व में रंगों की परंपरा का मूल भी **फूलों के पराग** से जुड़ा है।

5. साहित्य और दर्शन में पराग

- संस्कृत काव्य में पराग को **रस, सौंदर्य और प्रेम** का प्रतीक बताया गया है।
- भक्ति साहित्य में पराग को **ईश्वर-प्रेम की सुगंध** कहा गया है।

6. समग्र निष्कर्ष

भारतीय परम्परा में फूलों का पराग केवल एक जैविक तत्व नहीं, बल्कि

- जीवन का सार,
- सृजन की शक्ति,
- ज्ञान और चेतना,
- तथा **भक्ति और समर्पण** का गहन प्रतीक है।

यह प्रकृति और अध्यात्म के बीच सेतु का कार्य करता है और हमें सिखाता है कि जैसे पराग चुपचाप सृजन करता है, वैसे ही मनुष्य को भी **निःस्वार्थ कर्म और सकारात्मक ऊर्जा** का प्रसार करना चाहिए।

यूनिट - 05

निषेचन

01 – निषेचन की परिभाषा –

निषेचन (FERTILIZATION)–

1. परिभाषा (DEFINITION)

निषेचन (Fertilization) वह समष्टि जैविक प्रक्रिया है जिसमें **नर युग्मक (male gamete)** और **मादा युग्मक (female gamete)** का संयोग होता है, जिससे **युग्मनज (zygote)** का निर्माण होता है। यह प्रक्रिया **पुंकेसर और अंडप** के **युग्मकों के मिलन** द्वारा संपन्न होती है और नए जीवन या संतति के विकास की नींव रखती है।

पुष्पीय पौधों में, निषेचन परागकण के वर्तिकाग्र (stigma) पर पहुँचने और परागनली (pollen tube) के माध्यम से अंडाणु तक पहुँचने के बाद होता है।

2. जैविक दृष्टि से महत्व (BIOLOGICAL SIGNIFICANCE)

1. **भ्रूण निर्माण का आरंभ** – निषेचन युग्मनज का निर्माण करता है, जो भ्रूण और अंततः नए पौधे में विकसित होता है।
2. **बीज और फल का निर्माण** – अंडाणु निषेचन के बाद बीज में बदलता है; अंडाशय फल में विकसित होता है।
3. **आनुवंशिक संयोजन (Genetic Recombination)** – नर और मादा युग्मक के गुणों का संयोजन नई आनुवंशिक विविधता सुनिश्चित करता है।
4. **संकर शक्ति (Hybrid vigor / Heterosis)** – विशेष रूप से पर-परागन में संतान अधिक स्वास्थ्य और उत्पादकता दिखाती है।
5. **जैव विविधता और उत्क्रांति का आधार** – प्रकृति में नई प्रजातियों और अनुकूलन क्षमता का विकास निषेचन के माध्यम से संभव होता है।

3. पुष्पीय पौधों में निषेचन की प्रक्रिया (MOLECULAR AND CELLULAR PERSPECTIVE)

(क) परागन के पश्चात

- परागकण वर्तिकाग्र पर चिपकता है और अंकुरित होकर **परागनली (pollen tube)** बनाता है।
- परागनली को मार्गदर्शन देने के लिए वर्तिकाग्र और अंडाशय में **केमोटैक्टिक सिग्नल (Chemical signaling)** उत्पन्न होते हैं।

(ख) नर युग्मकों का संचार

- परागनली में दो नर युग्मक अंडाशय तक पहुँचते हैं।
- **पहला नर युग्मक** अंडाणु के साथ मिलकर **युग्मनज (zygote)** बनाता है।
- **दूसरा नर युग्मक** केंद्रीय कोशिका (central cell) के साथ मिलकर **एंडोस्पर्म (endosperm)** बनाता है।

(ग) द्वि-निषेचन (DOUBLE FERTILIZATION)

- यह विशेष रूप से **सच्चे फूल वाले (Angiosperms)** पौधों में पाया जाता है।
- **युग्मनज + एंडोस्पर्म निर्माण** = ऊर्जा और पोषण स्रोत के लिए आवश्यक संतुलन।

4. निषेचन के प्रकार (TYPES OF FERTILIZATION)

प्रकार	विवरण	उदाहरण
बाह्य निषेचन (External Fertilization)	युग्मक शरीर के बाहर मिलते हैं	मछली, मेंढक
आंतरिक निषेचन (Internal Fertilization)	युग्मक शरीर के अंदर मिलते हैं	स्तनधारी, पक्षी
द्वि-निषेचन (Double Fertilization)	पुष्पीय पौधों में, एक नर युग्मक + अंडाणु और दूसरा नर युग्मक + केंद्रीय कोशिका	गेहूँ, मक्का

5. निषेचन के जैव-रासायनिक और यांत्रिक पहलू

- परागनली मार्गदर्शन** – कैल्शियम आयन और प्रोटीन सिग्नल अंडाशय की ओर परागनली का मार्ग तय करते हैं।
- कोशिका संलयन (Cell Fusion)** – प्लाज़्मा झिल्ली, न्यूक्लियस और साइटोप्लाज़्म का संयोजन।
- एंडोस्पर्म पोषण** – द्वि-निषेचन द्वारा बने एंडोस्पर्म का विकास भ्रूण के लिए आवश्यक ऊर्जा और पोषण सुनिश्चित करता है।

6. निषेचन का विकासात्मक और आनुवंशिक महत्व

- संकर और जीन विविधता (Hybridization and Genetic Variation)**
 - नए जीन संयोजन से प्राकृतिक चयन और उत्क्रांति को बढ़ावा।
- फल और बीज की गुणवत्ता**
 - परागन और निषेचन की दक्षता सीधे कृषि उत्पादन और बीज गुणवत्ता को प्रभावित करती है।
- विकासात्मक अनुक्रम (Developmental Sequence)**
 - परागन → परागनली निर्माण → अंडाणु तक नर युग्मक का प्रवाह → युग्मनज + एंडोस्पर्म → बीज और फल।

02 – निषेचन के प्रकार –

निषेचन के प्रकार (TYPES OF FERTILIZATION)

निषेचन (Fertilization) वह जैविक प्रक्रिया है जिसमें नर युग्मक (male gamete) और मादा युग्मक (female gamete) का मिलन होता है। इसे विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है। प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं:

1. शारीरिक स्थान के आधार पर (BASED ON LOCATION)

(क) बाह्य निषेचन (EXTERNAL FERTILIZATION)

- नर और मादा युग्मक शरीर के बाहर मिलते हैं।
- मुख्यतः जल में रहने वाले जीवों में पाया जाता है।
- विशेषताएँ:
 - बहुत अधिक युग्मक उत्पादित होते हैं।
 - पर्यावरणीय परिस्थितियों पर निर्भर।
- उदाहरण: मछली, मेंढक

(ख) आंतरिक निषेचन (INTERNAL FERTILIZATION)

- नर युग्मक मादा के शरीर के अंदर पहुँचकर अंडाणु से मिलता है।
- मुख्यतः स्थलीय और जंतु में पाया जाता है।
- विशेषताएँ:
 - कम युग्मक पर्याप्त।
 - सुरक्षित और सफल निषेचन।
- उदाहरण: स्तनधारी, पक्षी, सरीसृप

2. पुष्पीय पौधों में (ANGIOSPERMS / FLOWERING PLANTS)

(क) एकल निषेचन (SINGLE FERTILIZATION)

- एक नर युग्मक एक मादा युग्मक से मिलता है।
- केवल युग्मनज का निर्माण होता है।
- उदाहरण: कुछ सरल पौधे

(ख) द्वि-निषेचन (DOUBLE FERTILIZATION)

- विशेष रूप से Angiosperms में।
- एक नर युग्मक अंडाणु से मिलकर युग्मनज (zygote) बनाता है।
- दूसरा नर युग्मक केंद्रीय कोशिका (central cell) से मिलकर एंडोस्पर्म (endosperm) बनाता है।

- **महत्त्व:** भ्रूण के लिए पोषण और ऊर्जा की आपूर्ति।
- **उदाहरण:** गेहूँ, मक्का, सरसों

3. विकास और आनुवंशिकी के आधार पर (BASED ON GENETIC COMBINATION)

(क) स्व-निषेचन (SELF-FERTILIZATION / AUTOGAMY)

- उसी पौधे के नर और मादा युग्मक मिलते हैं।
- आनुवंशिक स्थिरता बनी रहती है।
- **उदाहरण:** मूँग, मटर

(ख) पर-निषेचन (CROSS-FERTILIZATION / ALLOGAMY)

- अलग पौधों के युग्मक मिलते हैं।
- आनुवंशिक विविधता बढ़ती है।
- **उदाहरण:** गाजर, शकरकंद

4. विशेष प्रकार (SPECIAL TYPES)

(क) अंडाणु निषेचन (OOGAMY)

- नर युग्मक (sperm) छोटा और गतिशील, मादा युग्मक (egg) बड़ा और स्थिर।
- अधिकांश जंतु और पौधों में पाया जाता है।

(ख) समरूपी निषेचन (ISOGAMY)

- नर और मादा युग्मक समान आकार और संरचना के।
- सरल जलजीवों में पाया जाता है।

03 – द्विनिषेचन की प्रक्रिया –

द्विनिषेचन (DOUBLE FERTILIZATION) की प्रक्रिया – सम्पूर्ण विश्लेषण

द्विनिषेचन एक विशेष जैविक प्रक्रिया है जो केवल **Angiosperms (सच्चे फूल वाले पौधे)** में पाई जाती है। इसमें दो अलग-अलग निषेचन क्रियाएँ एक ही पुष्प में होती हैं—एक **युग्मनज (zygote)** के निर्माण के लिए और दूसरी **एंडोस्पर्म (endosperm)** के निर्माण के लिए। इसे पहली बार **सचिन्ट्रल और मार्टिनोविच** द्वारा खोजा गया था।

1. पूर्वपेक्षित अवस्था (PRE-FERTILIZATION STAGE)

(क) परागन (POLLINATION)

- परागकण (pollen grain) वर्तिकाग्र (stigma) पर पहुँचता है।
- परागकणों में 2 नर युग्मक (sperm nuclei) मौजूद होते हैं।

(ख) परागकोष का अंकुरण (POLLEN GERMINATION)

- परागकण वर्तिकाग्र पर अंकुरित होकर **परागनली (pollen tube)** बनाता है।
- परागनली अंडाशय की ओर बढ़ता है।

(ग) मार्गदर्शन (GUIDANCE OF POLLEN TUBE)

- अंडाशय की अंडाणु कोशिका और केंद्रीय कोशिका **केमोटैक्टिक सिग्नल** के माध्यम से परागनली की दिशा तय करती हैं।

2. द्विनिषेचन की प्रक्रिया (STEPS OF DOUBLE FERTILIZATION)

(क) प्रवेश (ENTRY OF POLLEN TUBE)

- परागनली अंडाशय में **माइक्रोपाइल (micropyle)** से प्रवेश करती है।

(ख) नर युग्मकों का वितरण (DISTRIBUTION OF SPERM NUCLEI)

- परागनली के अंदर 2 नर युग्मक अंडाणु तक पहुँचते हैं।

(ग) पहला निषेचन (FIRST FERTILIZATION)

- **एक नर युग्मक + अंडाणु (egg cell) → युग्मनज (zygote)** का निर्माण।
- यह भविष्य में **भ्रूण (embryo)** बनता है।

(घ) दूसरा निषेचन (SECOND FERTILIZATION)

- **दूसरा नर युग्मक + केंद्रीय कोशिका (central cell with 2 polar nuclei) → ट्रिप्लोइड (3n) एंडोस्पर्म (endosperm)** बनता है।
- एंडोस्पर्म भ्रूण को **पोषण और ऊर्जा** प्रदान करता है।

(ङ) निषेचन के परिणाम (OUTCOME)

- 1. युग्मनज (2n) → भ्रूण (Embryo)
- 2. एंडोस्पर्म (3n) → भ्रूण का पोषण और बीज के विकास के लिए खाद्य भंडारण

3. द्विनिषेचन का महत्व (SIGNIFICANCE)

- 1. भ्रूण के लिए पोषण सुनिश्चित करना – एंडोस्पर्म भ्रूण को प्रारंभिक ऊर्जा प्रदान करता है।
- 2. बीज और फल निर्माण – निषेचन के बाद अंडाशय बीज और फल में विकसित होता है।
- 3. जैविक दक्षता (Efficiency) – केवल एक परागनली और दो नर युग्मक पर्याप्त।
- 4. आनुवंशिक संयोजन (Genetic Variation) – युग्मनज और एंडोस्पर्म अलग-अलग गुणों के संयोजन से उत्पन्न।
- 5. Angiosperms की विशेषता – द्विनिषेचन केवल Angiosperms में पाया जाता है, Gymnosperms और अन्य पौधों में नहीं।

4. द्विनिषेचन का चरणबद्ध सार (STEPWISE SUMMARY)

- 1. परागन → वर्तिकाग्र पर चिपकना
- 2. परागकण अंकुरित होकर परागनली बनाना
- 3. परागनली अंडाशय की ओर बढ़ना
- 4. परागनली माइक्रोपाइल से प्रवेश करना
- 5. दो नर युग्मकों का वितरण
- 6. पहला निषेचन → अंडाणु + नर युग्मक → युग्मनज (2n)
- 7. दूसरा निषेचन → केंद्रीय कोशिका + नर युग्मक → एंडोस्पर्म (3n)
- 8. बीज और फल का निर्माण

5. तुलनात्मक विश्लेषण (DOUBLE FERTILIZATION VS SINGLE FERTILIZATION)

आधार	Single Fertilization	Double Fertilization
पौधों का प्रकार	Primitive Angiosperms / Gymnosperms	Angiosperms
निषेचन संख्या	1	2 (zygote + endosperm)

आधार	Single Fertilization	Double Fertilization
पोषण प्रणाली	अलग से नहीं	एंडोस्पर्म के माध्यम से भ्रूण पोषण
जैविक दक्षता	कम	अधिक
विशिष्टता	सामान्य	Angiosperms की विशिष्टता

04 – वैदिक काल में पौधों का निषेचन –

वैदिक काल में पौधों के निषेचन का सम्पूर्ण विश्लेषण

वैदिक काल (लगभग 1500–500 ईसा पूर्व) भारतीय संस्कृति और ज्ञान का वह काल है जब **वनस्पति विज्ञान (Botany)** और प्रकृति के अध्ययन की प्रारंभिक परंपरा विकसित हो रही थी। उस समय पौधों और उनके जीवन चक्र को धार्मिक, कृषि और दार्शनिक दृष्टि से देखा गया। निषेचन (Fertilization) का वैज्ञानिक विवरण वैदिक ग्रंथों में प्रत्यक्ष नहीं मिलता, लेकिन पौधों के परागण और बीज निर्माण का **अंतरंग और प्रतीकात्मक अध्ययन** किया गया।

1. वैदिक दृष्टिकोण और पौधों का महत्त्व

1. धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व

- ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद में पुष्पों, बीजों और वृक्षों का पूजा, यज्ञ और अनुष्ठान में उल्लेख मिलता है।
- फूलों के पराग को **सृष्टि और जीवन शक्ति** का प्रतीक माना गया।

2. आध्यात्मिक प्रतीकात्मकता

- पराग और बीज को **सृजन और उत्क्रांति** का सूक्ष्म रूप माना गया।
- देवताओं को अर्पित पुष्पों में निहित पराग **भक्ति और ऊर्जा का माध्यम** था।

3. कृषि दृष्टि

- वैदिक काल में **कृषि और बीज विज्ञान** का प्रारंभिक ज्ञान था।
- फसलों की उपयुक्त परागण और बीजोत्पादन को **फल और कृषि उत्पादन** के लिए महत्वपूर्ण माना गया।

2. पौधों के निषेचन का ज्ञान

वैदिक ग्रंथों में निषेचन का प्रत्यक्ष वैज्ञानिक विवरण नहीं है, लेकिन निम्नलिखित संकेत मिलते हैं:

1. बीज और फल निर्माण

- ऋग्वेद में बीज (Vrihi, Yava) और वृक्षों के बीजों की गुणवत्ता पर जोर।
- यह संकेत है कि पौधों में नर और मादा अंगों का मिलन (Fertilization) आवश्यक माना गया था।

2. पुष्प और परागण

- फूलों के रंग, सुगंध और पराग का उल्लेख वैदिक यज्ञ में।
- फूलों का उपयोग बीजोत्पादन और उन्नत फसल के लिए किया जाता था।

3. प्राकृतिक परागण एजेंसियों की समझ

- मधुमक्खी, तितली और जल/वायु परागण का सांकेतिक उल्लेख।
- यह बताता है कि परागण और उसके बाद निषेचन की प्रक्रिया का व्यावहारिक अनुभव वैदिक कृषकों को था।

3. निषेचन का प्रतीकात्मक और आध्यात्मिक अर्थ

1. सृजन और जीवन शक्ति

- जैसे नर और मादा युग्मक मिलकर नया जीवन उत्पन्न करते हैं, वैदिक ज्ञान में पराग और अंडाणु (बीज) का संयोजन सृष्टि के चक्र का प्रतीक है।

2. भक्ति और ऊर्जा का संचार

- पुष्पों के पराग का पूजा में उपयोग = जीवन ऊर्जा का ईश्वर को समर्पण।

3. सृजनात्मक संतुलन

- परागण और निषेचन प्रकृति में संतुलन और जैव विविधता बनाए रखने का प्रतीक।

4. कृषि और प्रजनन पर दृष्टि

1. बीज चयन और खेती

- ऋग्वेद में उपयुक्त बीज का चयन (सुपुष्ट फसल के लिए) → निषेचन की प्रारंभिक समझ।

2. फसल वृद्धि और उत्पादन

- फूलों की देखभाल और उनके परागण की समझ → बेहतर फल और बीज।

3. संकर पौधों का प्रयोग

- सीमित रूप से स्व-परागण और पर-परागण के अनुभव।

* समाप्त*